प्रकाशक—

पन्नालाल बाकलीवाल

महामंत्री—भारतीयजैनसिद्धांतप्रकाशिनी संस्था,

९ विश्वकोषलेन, बाघबाजार, कलकत्ता।

मुद्रक—

श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ,

जैनसिद्धांतप्रकाशक पवित्र प्रेस

९ विश्वकोषलेन, बाघबाजार कलकत्ता।

सूचना।

यह " सुलभजैनग्रंथमाला " का पांचवां ग्रंथ है। इसकी न्योछावर भी अति अल्प आठ आने रक्खी गई है। इसी प्रकार 'स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा ।||) नित्य-नियमपूजा =) छहढाला संग्रह =) विनती संग्रह =) द्रव्य संग्रह सार्थ =) शील-कथा ≡) दर्शनकथा ≡) दानकथा =) तीनोंकी जिल्द एक साथ ||) रक्खी गई है एवं बडा सूचीपत्र मंगाकर देखिये।

सिद्धांत ग्रंथ गोम्मटसारजी।

यदि आपके मंदिरजीमें उक्त ग्रंथ नहीं हैं तो आज ही एक पत्र भेजकर मंगा लीजिये। मोटे अक्षरोंमें पुष्ट कागज पर पवित्रताके साथ छपे हैं। पंडित टोडरमल्लजी कृत भाषा वचनिका और दो संस्कृतटीका साथ हैं। लब्धिसार क्षपणासारजी भी हैं। न्यो० ५१)

—मंत्री।

पूजा सूची ।

पूजा	पृष्ठ संख्या	पूजा	पृष्ठ संख्या
देव शास्त्र गुरुकी समुच्चय पूजा संस्कृत	१	पंचमेरुपूजा संस्कृत	३०
देवशास्त्रगुरुकी भाषा पूजा	१०	पंचमेरुपूजा भाषा	३२
बीस तीर्थंकर पूजा भाषा	१३	नंदीश्वर पूजा संस्कृत	३५
अकृत्रिम चैत्यालयोंका अर्घ	१७	नन्दीश्वर दीपकी पूजा भाषा	४२
सिद्धपूजा संस्कृत	१९	सोलहकारण पूजा संस्कृत	४५
सिद्धपूजाका भावाष्टक	२३	सोलहकारण पूजा भाषा	४९
सोलह कारणके अर्घ	२४	दशलक्षण पूजा संस्कृत	५२
दशलक्षणधर्मके अर्घ	२४	दशलक्षण पूजा भाषा	६१
रत्नत्रयका अर्घ	२४	दशलक्षण पूजाके अष्टक (दूसरे)	६७
पंचपरमेष्ठीकी जयमाल	२४	रत्नत्रय पूजा संस्कृत	६९
शांतिपाठ संस्कृत	२५	रत्नत्रय पूजा भाषा	८४
विसर्जन	२७	दर्शन पूजा संस्कृत	७०

भाषा स्तुति पाठ	७९	दर्शन पूजा भाषा	८६
ज्ञान पूजा संस्कृत	७४	लघुस्वयंभूस्तोत्र संस्कृत	१००
ज्ञान पूजा भाषा	८७	स्वयंभूस्तोत्र भाषा	१०२
चारित्र पूजा संस्कृत	७८	देव पूजा भाषा	१०५
चारित्र पूजा भाषा	८८	सरस्वतीपुजा भाषा	१०९
चौवीस तीर्थंकरोंकी निर्वाणक्षेत्र पूजा	९१	गुरु पूजा भाषा	१११
समुच्चय चौवीसी पूजा	९३	लघु अभिषेक पाठ संस्कृत ; सबसे पहिले)	
सप्तऋषि पूजा	९६	अभिषेकपाठ भाषा	५

संस्कृत लघु अभिषेक पाठ।

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम्।
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतुर्जैनेंद्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि॥

इस श्लोकको पढकर जिनचरणोंमें पुष्पांजलि छोडनी चाहिये।

श्रीमन्मन्दरसुन्दरे शुचिजलैर्धौते सदर्भाक्षतैः
पीठे मुक्तिवरं निधाय रचितं, त्वत्पादपद्मस्रजः।
इंद्रोऽहं निजभूषणार्थकमिदं यज्ञोपवीतं दधे
मुद्राकंकणशेखराण्यपि तथा जैनाभिषेकोत्सवे॥

इस श्लोकको पढकर अभिषेक करनेवालोंको यज्ञोपवीत तथा नानाप्रकारके सुन्दर आभूषण धारण करना चाहिये।

सौगन्ध्यसंगतमधुव्रतझंकृतेन सौवर्ण्यमानमिव गन्धमनिन्द्यमादौ ॥
आरोपयामि विबुधेश्वरवृन्दवन्द्यपादारविन्दमभिवन्द्य जिनोत्तमानाम्

इस श्लोकको पढकर अभिषेक करनेवालोंको अपने अंगमें शास्त्र प्रमाण चन्दनके नव तिलक करना चाहिये।

ये सन्ति केचिदिह दिव्यकुलप्रसूता नागाः प्रभूतबलदर्पयुता विबोधाः।
संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम् ॥

इस श्लोकको पढकर अभिषेककेलिये भूमिका प्रक्षालन करै।

क्षीरार्णवस्य पयसां शुचिभिः प्रवाहैः प्रक्षालितं सुरवरैर्यदनेकवारम्।
अत्युद्धमुद्यतमहं जिनपादपीठं प्रक्षालयामि भवसंभवतापहारि ॥

जिस पीठ पर (सिंहासन पर) विराजमान करके अभिषेक करना होवे उसका प्रक्षालन करना चाहिये।

श्रीशारदासुमुखनिर्गतबीजवर्णं श्रीमंगलीकवरसर्वजनस्य नित्यं।

श्रीमत्स्वयं क्षपितमस्य विनाशविघ्नं श्रीकारवर्णलिखितं जिनभद्रपीठे ।

इस श्लोकको पढ़कर पीठ पर श्रीकार लिखना चाहिये ।

इन्द्राग्निदण्डधरनैर्ऋतपाशपाणि—

वायूत्तरेशशशिमौलिफणीन्द्रचन्द्राः ।

आगत्य यूयमिह सानुचराः सचिह्नाः

स्वं स्वं प्रतीच्छत बलिं जिनपाभिषेके ॥

नीचे लिखे मंत्रोंको पढ़कर क्रमसे दशदिक्पालोंके लिये अर्घ्य चढाओ ।

१ ओं आं क्रौं ह्रीं इन्द्र आगच्छ आगच्छ इन्द्राय स्वाहा ।

२ ओं आं क्रौं ह्रीं अग्ने आगच्छ आगच्छ अग्नये स्वाहा ।

३ ओं आं क्रौं ह्रीं यम आगच्छ आगच्छ यमाय स्वाहा ।

४ ओं आं क्रौं ह्रीं नैर्ऋत आगच्छ आगच्छ नैर्ऋताय स्वाहा ।

५ ओं आं क्रौं ह्रीं वरुण आगच्छ आगच्छ वरुणाय स्वाहा ।

६ ओं आं क्रौं ह्रीं पवन आगच्छ आगच्छ पवनाय स्वाहा ।

७ ओं आं क्रौं ह्रीं कुबेर आगच्छ आगच्छ कुबेराय स्वाहा ।

८ ओं आं क्रौं ह्रीं ऐशान आगच्छ आगच्छ ऐशानाय स्वाहा ।

९ ओं आं क्रौं ह्रीं धरणीन्द्र आगच्छ आगच्छ धरणीन्द्राय स्वाहा ।

१० ओं आं क्रौं ह्रीं सोम आगच्छ आगच्छ सोमाय स्वाहा ।

इति दिक्पालमन्त्राः ।

दध्युज्ज्वलाक्षतमनोहरपुष्पदीपैः
पात्रार्पितं प्रतिदिनं महतादरेण ।
त्रैलोक्यमंगलसुखानलकामदाह-
मारार्तिकं तव विभोरवतारयामि ॥

दधि अक्षत पुष्प और दीप रकाबीमें लेकर मंगल पाठ तथा अनेक वादित्रोंके साथ त्रैलोक्यनाथकी आरती उतारनी चाहिये ।

यं पांडुकामलशिलागतमादिदेव-
मस्नापयन्सुरवराः सुरशैलमूर्ध्नि ।

कल्याणमीप्सुरहमक्षततोयपुष्पैः
सम्भावयामि पुर एव तदीयबिम्बम् ॥

जल अक्षत पुष्प क्षेपकर श्रीकार लिखित पीठपर जिनबिम्बकी स्थापना करनी चाहिये।

सत्पल्लवार्चितमुखान्कलधौतरूप्य-
ताम्रारकूटघटितान्पयसा सुपूर्णान् ।
संवाह्यतामिव गतांश्चतुरःसमुद्रान्
संस्थापयामि कलशान् जिनवेदिकान्ते ॥

जलपूरित सुन्दर पत्तोंसे ढके हुए सुवर्णादि धातुओंके चार कलश वेदीके कोनोंमें स्थापन करने चाहिये ।

आभिः पुण्याभिरद्भिः परिमलबहुलेनामुना चन्दनेन
श्रीहृक्पेयैरमीभिः शुचिसदकचयैरुद्गमैरेभिरुद्धैः ।
हृद्यैरेभिर्निवेद्यैर्मखभवनमिदं दीपयद्भिः प्रदीपैः

धूपैः प्रायोभिरेभिः पृथुभिरपि फलैरेभिरीशं यजामि ॥

इस मन्त्र गर्भित श्लोकको पढकर यजामि शब्दके पूर्ण होते २ अर्घ चढा देना चाहिये।

दूरावनम्रसुरनाथकिरीटकोटी-
संलग्नरत्नकिरणच्छविधूसरांघ्रिम्।
प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टैः
भक्त्या जलैर्जिनपतिं बहुधाऽभिषिंचे ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरपर्यंतजिनबिंबस्योपरि....नगरे मासानामुत्तमे मासे....पक्षे...तिथौ....वासरे मुनि-आर्यिकाणां क्षुल्लकक्षुल्लिकाणां श्रावकश्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं जलधारा दीयते इति स्वाहा।

इस मंत्रको पढतेहुये जिनप्रतिमा पर जलके कलशसे धारा छोडनी चाहिये।

उदक चंदन....आदि बोलकर प्रत्येक धारा देनेकेबाद अर्घ चढाना चाहिये।

उत्कृष्टवर्णनवहेमरसाभिराम-
देहप्रभावलयसंगमलुप्तदीप्तिम्।

धारां घृतस्य शुभगन्धगुणानुमेयां
वन्देऽर्हतां सुरभिसंस्नपनोपयुक्ताम् ॥

ऊपरके मंत्रमें जलधाराकी जगह घृतधारा कहकर घृतके कलशसे स्नपन करना चाहिये ।

सम्पूर्णशारदशशांकमरीचिजाल-
स्यन्दैरिवात्मयशसामिव सुप्रवाहैः ।
क्षीरैर्जिनाः शुचितरैरभिषिच्यमानाः
सम्पादयन्तु मम चित्तसमीहितानि ॥

ऊपरके मंत्रमें जलधाराकी जगह क्षीरधारा कहकर दुग्धके कलशसे अभिषेक करना चाहिये ।

दुग्धाब्धिवीचिचयसंचितफेनराशि-
पांडुत्वकान्तिमवधारयतामतीव ।
दध्नां गता जिनपतेः प्रतिमां सुधारा
सम्पद्यतां सपदि वांछितसिद्धये वः ॥

ऊपरके मंत्रमें दधिधारा कहकर दधिके कलशसे अभिषेक करना चाहिये ।

भक्त्या ललाटतटदेशनिवेशितोच्चै-

हस्तैश्च्युताः सुरवराऽसुरमर्त्यनाथैः।

तत्कालपीलितमहेक्षुरसस्य धारा

सद्यः पुनातु जिनबिम्बगतैव युष्मान् ॥

ऊपरके मंत्रमें इक्षुधारा कहकर इक्षुरसके कलशसे अभिषेक करना चाहिये।

संस्नापितस्य घृतदुग्धदधीक्षुवाहैः

सर्वाभिरोषधिभिरद्भुतमुज्ज्वलाभिः।

उद्वर्तितस्य विदधाम्यभिषेकमेला-

कालेयकुंकुमरसोत्कटवारिपूरैः ॥

ऊपरके मंत्रमें सर्वौषधि कहकर सर्वौषधिके कलशसे अभिषेक करना चाहिये।

द्रव्यैरनल्पघनसारचतुःसमाद्यै-

रामोदवासितसमस्तदिगन्तराप्तैः।

१ घृत दुग्ध दधि आदिके मिलानेसे सर्वौषधि होती है तथा कपूरादि सुगन्ध द्रव्योंके मिलानेसे भी सर्वौषधि होती है

मिश्रीकृतेन पयसा जिनपुंगवानां
त्रैलोक्यपावनमहं स्नपनं करोमि ॥

ऊपरके मन्त्रमें सुरभि जलधारा पढकर केसर कस्तूरी कर्पूरादिसे बनाये हुये सुगन्धित जलसे स्नपन करना चाहिये ।

इष्टैर्मनोरथशतैरिव भव्यपुंसां
पूर्णैः सुवर्णकलशैर्निखिलावसाने ।
संसारसागरविलंघनहेतुसेतु-
माप्लावये त्रिभुवनैकपतिं जिनेन्द्रम् ॥

ऊपरके मन्त्रमें अवशिष्टजलधारा पढ़कर शेष बचे हुये संपूर्ण कलशोंसे अभिषेक करना चाहिये ।

मुक्तिश्रीवनिताकरोदकमिदं पुण्यांकुरोत्पादकम्
नागेन्द्रत्रिदशेन्द्रचक्रपदवीराज्याभिषेकोदकम् ।

सम्यग्ज्ञानचरित्रदर्शनलतासंवृद्धिसम्पादकं
कीर्तिश्रीजयसाधकं तव जिन ! स्नानस्य गन्धोदकम् ।

इस श्लोकको पढकर अंगमें गन्धोदक लगाना चाहिये ।

इति श्रीलघुरभिषेकविधिः समाप्तः ॥

———:※:———

खतौलीनिवासी स्व० पं० हरजसरायजीकृत

अभिषेकपाठ भाषा ।

दोहा ।

जय जय जयवंते सदा, मंगलमूल महान ।
वीतराग सर्वज्ञ प्रभु, नमो जोरि जुगपान ॥ १ ॥

ढाल मंगलकी, छंद गीता और अडिल्ल ।

श्रीजिन जगमैं ऐसो, को बुधवंत जू ।
जो तुम गुण वरननि करि, पावै अंत जू ॥
इंद्रादिक सुर चार,—ज्ञानधारी मुनी ।
कहि न सकैं तुम गुणगण, हे त्रिभुवनधनी ॥
अनुपम अमित तुम गुणनि वारिधि, ज्यों अलोकाकाश है ।
किम धरैं हम उरकोशमें सो, अकथ गुणमणिराशि है ॥
पै निज प्रयोजनसिद्धिकी तुम, नाममहीमें शक्ति है ।
यह चित्तमें सरधान यातैं, नामहीमें भक्ति है ॥ १ ॥

ज्ञानावरणी दर्शनआवरणी भने
कर्ममोहनी अंतराय चारौ हने ॥

लोकालोक विलोको केवलज्ञानमें
इंद्रादिकके मुकुट नये सुरथानमें ॥
तब इंद्र जानौ अवधितैं, उठि सुरनयुत बंदत भयौ।
तुम पुन्यको प्रेरो हरी है, मुदित धनपतिसों चयौ ॥
अब वेगि जाय रचौ समवसृति, सफल सुरपदकों करौ।
साक्षात श्रीअरहंतके, दर्शन करौ कलमष हरौ ॥ २ ॥
ऐसे वचन सुने सुरपतिके धनपती।
चल आयौ ततकाल, मोद धारे अती ॥
वीतराग छबि देखि, शब्द जय जय चयौ।
दे प्रदक्षिणा बार बार, बंदत भयौ ॥
अति भक्तिभीनो नम्र चित है, समवसरण रच्यौ सही।
ताकी अनूपम शुभगतीको, कहन समरथ कोउ नहीं ॥

प्राकार तोरण सभामंडप, कनक मणिमय छाजही ।
नग-जडित गंधकुटी मनोहर, मध्यभाग विराजही ॥ ३ ॥
सिंहासन तामध्य, बनो अद्भुत दिपै ।
तापर वारिज रचौ, प्रभा दिनकर छिपै ॥
तीन छत्र सिर शोभित, चौसठ चमरजी ।
महाभक्तियुत ढोरत हैं, तहां अमरजी ॥
प्रभु तरन तारन कमल ऊपर, अंतरीच्छ विराजिया ।
यह वीतरागदशा प्रतच्छ, विलोकि भविजन सुख लिया ॥
मुनि आदि द्वादश सभाके, भवि जीव मस्तक नायकैं ।
बहु भांति बारंवार पूजैं, नमैं गुणगण गायकैं ॥ ४ ॥
परमौदारिक दिव्य देह पावन सही ।
छुधा तृषा चिंता भय गद दूषण नहीं ॥

जन्म जरा मृति अराति, शोक विस्मय नसे ।
राग द्वेष निद्रा मद, मोह सबै खसे ॥
श्रम विना श्रमजलरहित पावन, अमल जोतिस्वरूपजी ॥
शरणागतनिकी अशुचिता हरि, करत विमल अनूपजी ॥
ऐसे प्रभूकी शांतिमुद्रा,-को स्नपन जलतैं करैं ।
'जस' भक्तिवश मन उक्तितैं हम, भानु ढिंग दीपक धरैं ॥
तुम तौ सहज पवित्र, यही निश्चय भयौ ।
तुम पवित्रता हेत, नहीं मज्जन ठयौ ॥
मैं मलीन रागादिक, मलतैं ह्वै रह्यो ।
महा मलिन तनमें वसु,-विधिवश दुख सह्यौ ॥
बीतौ अनंतौ काल यह, मेरी अशुचिता ना गई ।
तिस अशुचिताहर एक तुम ही, भरहु वांछा चित ठई ॥

अब अष्ट कर्म विनास सब मल,—रोस रागादिक हरौ।
तनरूप कारागेहतैं उद्धार, शिववासा करौ ॥ ६ ॥

मैं जानत तुम अष्ट कर्म हरि शिव गये।
आवागमनविमुक्त रागवर्जित भये ॥
पर तथापि मेरो मनरथ पूरत सही।
नय प्रमाणतैं जानि, महा साता लही ॥

पापाचरन तजि न्हवन करतौ, चित्तमें ऐसे धरूं।
साक्षात श्रीअरहंतकौ, मानौं स्नपन परसन करूं ॥
ऐसे विमल परिणाम होतैं, अशुभ परणति नासतैं।
विधि अशुभ नासि शुभबंधतैं, ह्वै शर्म सब विधि तासतैं ॥ ७ ॥

पावन मेरे नयन, भये तुम दरसतैं।
पावन पानि भये तुम, चरनानि परसतैं ॥

पावन मन है गयौ, तिहारे ध्यानतैं ।
पावन रसना मानी, गुणगण गानतैं ॥
पावन भई परजाय मेरी, भयौ मैं पूरणधनी ।
मैं शक्तिपूर्वक भक्ति कीनी. पूर्ण भक्ति नहीं बनी ॥
धन धन्य ते बडभागि भवि. तिन नींव शिवघरकी धरी ।
वर क्षीरसागर आदि जलमणि.—कुंभ भरि भक्ती करी ॥ ८ ॥
विघन सघन वनदाहन, दहन प्रचंड हो ।
मोह महातम दलन, प्रबल मारतंड हो ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश, आदि संज्ञा धरो ।
जगविजयी जमराज, नाश ताको करो ॥
आनंदकारण दुःखनिवारण, परम मंगलमय सही ।
मो सौ पतित नहिं और तुम सौ, पतिततार सुनौ नही ॥

चिंतामणी पारस कलपतरु, एक भव सुखकार ही ॥
तुम भक्तिनवका जे चढे, ते भये भवदधि पार ही ॥ ९ ॥

दोहा।

तुम भवदधि तरि शिव गये, भये निकल अविकार।
तारतम्य इस भक्तिको, हमें उतारो पार ॥ १०॥

इति अभिषेक पाठ।

पंचमृताभिषेकपाठ।

श्रीजिनवर चोवीस वर, कुनयध्वांतहर भान।
अमितवीर्यदृगबोधसुख,-युत तिष्ठो इह थान ॥ १ ॥

नाराच छंद।

गिरीश शीस पांडुपै, सचीश ईश थापियो।
महोत्सवो आनंदकंदको, सबै तहां कियौ ॥

हमें सो शक्ति नाहिं, व्यक्त देखि हेतु आपना ।
यहां करैं जिनेन्द्रचन्द्रकी सुबिंबथापना ॥ २ ॥

पुष्पांजलि क्षेपण करके श्रीवर्णपर जिनबिंबकी स्थापना करना ।

सुन्दरी छंद ।

कनकमणिमयकुंभ सुहावने । हरि सुक्षीर भरे अति पावने ।
हम सुवासित नीर यहां भरैं । जगत पावन-पांय तरैं धरैं ॥ ३ ॥
शुद्धोपयोग समान भ्रमहर, परम सौरभ पावनो ।
आकृष्टभ्रगसमूह गंगा,- समुद्भवो अति भावनो ॥
मणिकनककुंभ निसुंभकिल्विष, विमल शीतल भरि धरौं ।
श्रम स्वेद मल निरवार जिन, त्रयधार दे पांयनि परौं ॥ ४ ॥

शुद्ध जलकी तीन धारा जिनबिंबपर छोड़ना ।

अति मधुर जिनधुनिसम सुप्राणित, प्राणिवर्ग स्वभावसौं ।

बुधचित्तसम हरचित्त नित, सुमिष्ट इष्ट उछावसों ।
तत्काल इक्षुसमुत्थ प्रासुक, रत्नकुंभविषे भरों ।
यमत्रासताप निवार जिन, त्रयधार दे पांयनि परों ॥ ५ ॥

इक्षुरसकी धारा ।

निष्तप्तक्षिप्तसुवर्णमहदमनीय, ज्यों विधि जैनकी ।
आयुप्रदा बलबुद्धिदा रक्षा, सु यों जिय-सेनकी ॥
तत्कालमंथित, क्षीरउत्थित, प्राज्य मणिझारी भरों ।
दीजे अतुलबल मोहि जिन, त्रयधार दे पांयन परों ॥ ६ ॥

(घृतरसकी धारा)

शरदाभ्र शुभ्र सुहाटकद्युति सुरभि पावन सोहनो ।
के व्यक्त हर बल धरन पूरन, पय सकल मनमोहनो ॥

कृतउष्ण गोथनतैं समाहृत, घट जटित मणिमैं भरौं ।
दुर्बलदशा मो मेंट जिन, त्रयधार दे पांयन परों ॥ ७ ॥

दूधकी धारा ।

वर विशद जैनाचार्य ज्यौं, मधुराम्लकर्कशता धरै ।
शुचिकर रासिक मंथन विमंथित, नेह दोनों अनुसरै ॥
गोदधि सुमणिभृंगार पूरन, लायकर आगे धरों ।
दुखदोष कोष निवार जिन, त्रयधार दे पांयनि परों ॥ ८ ॥

दहीकी धारा ।

सर्वौषधी मिलायके, भरि कंचनभृंगार ।
यजों चरण त्रयधार दे तारि तारि भवतार ॥ ९ ॥

इति सर्वौषधिधारा ।

इति भाषा पंचामृताभिषेक समाप्त ।



श्रीपरमात्मने नमः।

भदैंया पूजासंग्रह।

देवशास्त्रगुरुपूजा।

ओं जय जय जय। नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु।
णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आयरीयाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं॥

ओं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः।

(यहां पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिये)

चत्तारि मंगलं—अरहंतमंगलं सिद्धमंगलं साहुमंगलं केवलिपण्ण-

चो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंतलोगुत्तमा, सिद्धलोगुत्तमा, साहुलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारिसरणं पव्वज्जामि—अरहंतसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहुसरणं पव्वज्जामि केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि ॥

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा।

(यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये।)

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा।
ध्यायेत्पञ्चनमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥
अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥ २ ॥
अपराजितमन्त्रोऽयं सर्वविघ्नविनाशनः।
मंगलेषु च सर्वेषु प्रथमं मंगलं मतः ॥ ३ ॥
एसो पंचणमोयारो सव्वपावप्पणासणो।

मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होइ मंगलं ॥ ४ ॥

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः ।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥ ५ ॥

कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् ।
सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥ ६ ॥

(यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये ।)

(यदि अवकाश हो, तो यहांपर सहस्रनाम पढकर दश अर्घ देना चाहिये, नहीं तो नीचे लिखा श्लोक पढकर एक अर्घ चढाना चाहिये ।)

उदकचंदनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिन सहस्रनामभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं
स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम् ।

श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतु-
जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि ॥ ८ ॥
स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुंगवाय
स्वस्ति स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय ।
स्वस्ति प्रकाशसहजोर्जितदृङ्मयाय
स्वस्ति प्रसन्नललिताद्भुतवैभवाय ॥ ९ ॥
स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधाप्लवाय
स्वस्ति स्वभावपरभावविभासकाय ।
स्वस्ति त्रिलोकविततैकचिदुद्गमाय
स्वस्ति त्रिकालसकलायतविस्तृताय ॥ १० ॥
द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं
भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः ।
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन्

भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥ ११ ॥

अर्हत्पुराणपुरुषोत्तमपावनानि
वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव ।
अस्मिन् ज्वलद्विमलकेवलबोधवह्नौ
पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥ १२ ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण करना)

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः। श्रीसंभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः। श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः। श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः। श्रीपुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः। श्रीश्रेयान्स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः। श्री-विमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनन्तः। श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्री-शान्तिः। श्रीकुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः। श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः। श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः।

श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः । (पुष्पांजलि क्षेपण)

नित्याप्रकम्पाद्भुतकेवलौघाः स्फुरन्मनःपर्य्ययशुद्धबोधाः ।
दिव्यावधिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ १ ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण)

(आगे प्रत्येक श्लोकके अन्तमें पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये ।)

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं संभिन्नसंश्रोतृपदानुसारि ।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ २ ॥
संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादनघ्राणविलोकनानि ।
दिव्यान्मतिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ३ ॥
प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः ।
प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तविज्ञाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ४ ॥
जङ्घावलिश्रेणिफलाम्बुतन्तुप्रसूनबीजाङ्कुरचारणाह्वाः ।
नभोऽङ्गणस्वैरविहारिणश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ५ ॥

अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि ।
मनोवपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ६ ॥
सकामरूपित्ववशित्वमैश्यं प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः ।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ७ ॥
दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः ।
ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरन्तः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥८॥
आमर्षसर्वौषधयस्तथाशीर्विषंविषा दृष्टिविषंविषाश्च ।
सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ९ ॥
क्षीरं स्रवन्तोऽत्र घृतं स्रवन्तो मधु स्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्तः ।
अक्षीणसंवासमहानसाश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ १० ॥

इति स्वस्तिमंगलविधानं ।

सार्वः सर्वज्ञनाथः सकलतनुभृतां पापसन्तापहर्ता
त्रैलोक्याक्रान्तकीर्तिः क्षतमदनरिपुर्घातिकर्मप्रणाशः ।

वि० ५

श्रीमान्निर्वाणसम्पद्वरयुवतिकरालीढकण्ठः सुकण्ठै-
देवेन्द्रैर्वन्द्यपादो जयति जिनपतिः प्राप्तकल्याणपूजः ॥ १ ॥



जय जय जय श्रीसत्कान्तिप्रभो जगतां पते !
जय जय भवानेव स्वामी भवाम्भसि मज्जताम् ।
जय जय महामोहध्वान्तप्रभातकृतेऽर्चनम्
जय जय जिनेश त्वं नाथ प्रसीद करोम्यहम् ॥ २ ॥

ओं ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् । (इत्याह्वानम्)



ओं ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । (इति स्थापनम्)
ओं ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् । (इति सान्निधिकरणम्)

देवि श्रीश्रुतदेवते भगवति त्वत्पादपंकेरुह-
द्वन्द्वे यामि शिलीमुखत्वमपरं भक्त्या मया प्रार्थ्यते ।
मातश्चेतसि तिष्ठ मे जिनमुखोद्भूते सदा त्राहि मां
दृग्दानेन मयि प्रसीद भवतीं सम्पूजयामोऽधुना ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मयुगं गुरोः ।
तपःप्राप्तप्रतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महात्मनः ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

देवेन्द्रनागेन्द्रनरेन्द्रवन्द्यान् शुम्भत्पदान् शोभितसारवर्णान् ।
दुग्धाब्धिसंस्पर्धिगुणैर्जलौघैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ १ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

तात्पर्यत्त्रिलोकोदरमध्यवर्तिसमस्तसत्त्वाऽहितहारिवाक्यान् ।
श्रीचन्दनैर्गन्धविलुब्धभृंगैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ २ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणोऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यतरीन् सुभक्त्या ।
दीर्घाक्षतांगैर्धवलाक्षतौघैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणोऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

विनीतभव्याब्जविबोधसूर्य्यान्वर्यान् सुचर्य्याकथनैकधुर्य्यान्।
कुन्दारविन्दप्रमुखैः प्रसूनैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥४॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणोऽनन्तानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कुदर्पकन्दर्पविसर्प्पसर्प्पप्रसह्यनिर्णाशनवैनतेयान्।
प्राज्याज्यसारैश्चरुभी रसाढ्यैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन्यजेऽहम् ॥५॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ध्वस्तोद्यमान्धीकृतविश्वविश्वमोहान्धकारप्रतिघातदीपान् ।
दीपैः कनत्कांचनभाजनस्थैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेहम् ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दुष्टाष्टकर्मेन्धनपुष्टजालसंधूपने भासुरधूमकेतून् ।

धूपैर्विधूतान्यसुगन्धगन्धैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणोऽनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसामगम्यान् कुवादिवादाऽस्खलितप्रभावान् ।
फलैरलं मोक्षफलाभिसारैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणोऽनंतानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सद्वारिगंधाक्षतपुष्पजातैर्नैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः ।
फलैर्विचित्रैर्घनपुण्ययोगान् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥१॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणोऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ये पूजां जिननाथशास्त्रयमिनां भक्त्या सदा कुर्वते
त्रैसन्ध्यं सुविचित्रकाव्यरचनामुच्चारयन्तो नराः ।
पुण्याढ्या मुनिराजकीर्तिसहिता भूत्वा तपोभूषणा-
स्ते भव्याः सकलावबोधरुचिरां सिद्धिं लभन्ते पराम् ॥ २ ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलि क्षेपण करना ।)

वृषभोऽजितनामा च संभवश्चाभिनन्दनः ।

सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तमः ॥ १ ॥
चंद्राभः पुष्पदन्तश्च शीतलो भगवान्मुनिः ।
श्रेयांश्च वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः ॥ २ ॥
अनन्तो धर्मनामा च शांतिः कुन्थुर्जिनोत्तमः ।
अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥ ३ ॥
हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः ।
ध्वस्तोपसर्गदैत्यारिः पार्श्वो नागेन्द्रपूजितः ॥ ४ ॥
कर्मान्तकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसम्भवः ।
एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥ ५ ॥
पूजिता भरताद्यैश्च भूपेन्द्रैर्भूरिभूतिभिः ।
चतुर्विधस्य संघस्य शांतिं कुर्वन्तु शाश्वतीम् ॥ ६ ॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
सम्यक्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥ ७ ॥

(पुष्पांजालि क्षेपण करना)

श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
सज्ज्ञानमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥ ८ ॥

(पुष्पांजालि क्षेपण करना)

गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
चारित्रमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥ ९ ॥

(पुष्पांजालि क्षेपण करना)

अथ देवजयमाला प्राकृत ।

वत्ताणुट्ठाणे जणधणुदाणे पइपोसिउ तुहु खत्तधरु ।
तुहु चरणविहाणे केवलणाणे तुहु परमप्पउ परमपरु ॥ १ ॥
जय रिसह रिसीसर णमियपाय । जय अजिय जियंगमरोसराय ।
जय संभव संभवकयविओय । जय अहिणंदण णंदिय पओय ॥ २ ॥
जय सुमइ सुमइ सम्मयपयास । जय पउमप्पह पउमाणिवास ।
जय जयहि सुपास सुपासगत्त । जय चंदप्पह चंदाहवत्त ॥ ३ ॥

जय पुप्फयंत दंततरंग । जय सीयल सीयलवयणभंग ।
जय सेय सेयकिरणोहसुज्ज । जय वासुपुज्ज पुज्जाणपुज्ज ॥ ४ ॥
जय विमल विमलगुणसेढिठाण । जय जयहि अणंताणंतणाण ।
जय धम्म धम्मतित्थयर संत । जय सांति सांति विहियायवत्त ॥ ५ ॥
जय कुंथु कुंथुपहुअंगिसदय । जय अर अर माहर विहियसमय ।
जय मल्लि मल्लिआदामगंध । जय मुणिसुव्वय सुव्वयणिबंध ॥ ६ ॥
जय णमि णमियामरणियरसामि । जय णेमि धम्मरहचक्कणेमि ।
जय पास पासछिंदणकिवाण । जय वड्ढमाण जसवड्ढमाण ॥ ७ ॥

घत्ता ।

इह जाणिय णामहिं, दुरियविरामहिं, परहिंवि णमिय सुरावलिहिं ।
अणाहणहिं अणाइहिं, समियकुवाइहिं, पणविमि अरहंतावलिहिं ॥
ओं ह्रीं वृषभादिमहावीरान्तेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

अथ शास्त्रजयमाला प्राकृत ।

संपइ सुहकारण, कम्मवियारण, भवसमुद्दतारणतरणं ।
जिणवाणि णमस्समि, सत्तपयस्समि, सग्गमोक्खसंगमकरणं ॥ १ ॥

जिणंदमुहाओ विणिग्गयतार । गणिंदविगुंफिय गंथपयार ।
तिलोयहिमंडण धम्मह खाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ २ ॥
अवग्गहईहअवायजुएहि । सुधारणभेयहिं तिण्णिसएहि ।
मई छत्तीस वहुप्पमुहाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ३ ॥
सुदं पुण दोण्णि अणेयपयार । सुबारहभेय जगत्तयसार ।
सुरिंदणरिंदसमुच्चिओ जाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ४ ॥
जिणिंदगणिंदणरिंदह रिद्धि । पयासइ पुण्णपुराकिउलद्धि ।
णिउग्गु पहिल्लउ एहु वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ५ ॥
जु लोयअलोयह जुत्ति जणेइ । जु तिण्णिवि कालसरूव भणेइ ।
चउग्गइलक्खण दुज्जउ जाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ६ ॥
जिणिंदचरित्तविचित्त मुणेइ । सुसावयधम्मह जुत्ति जणेइ ।
णिउग्गु वितिज्जउ इत्थु वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ७ ॥
सुजीवअजीवह तच्चह चक्खु । सुपुण्ण विपाव विबंध विमुक्खु ।
चउत्थु णिउग्गु विभासिय णाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ८ ॥
तिभेयहिं ओहि विणाण विचित्तु । चउत्थु रिजोविउलं मयउत्तु ।
सुखाइय केवलणाण वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ९ ॥

जिणिंदह णाणु जगत्तयभाणु । महातमणासिय सुक्खणिहाणु ।
पयत्थहुभंगिभरेण वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ १० ॥
पदाणि सुबारहकोडि सयेण । सुलक्खतिरासिय जुत्ति भरेण ।
सहसअट्ठावण पंचवियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ११ ॥
इक्कावण कोडिउ लक्ख अठेव । सहस चुलसीदिसया छक्केव ।
सढाइगवीसह गंथपमाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ १२ ॥

घत्ता ।

इह जिणवरवाणि विसुद्धमई । जो भवियण णियमण धरई ।
सो सुरणरिंदसंपय लहई । केवलणाण वि उत्तरई ॥ १३ ॥

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ गुरुजयमाला प्राकृत ।

भवियह भवतारण, सोलह कारण, अज्जवि तित्थयरत्तणहं ।
तव कम्म असंगइ दयधम्मंगइ पालवि पंच महव्वयहं ॥ १ ॥
वंदामि महारिसि सीलवंत । पंचेंदियसंजम जोगजुत्त ।
जे ग्यारह अंगह अणुसरंति । जे चउदहपुव्वह मुणि थुणंति ॥ २ ॥

पादाणुसारवर कुट्ठबुद्धि । उप्पण्णजाइ आयासरिद्धि
जे पाणाहारी तोरणीय । जे रुक्खमूल आतावणीय ॥ ३ ॥
जे मोणिधाय चंद्राहणीय । जे जत्थत्थवणि णिवासणीय ।
जे पंचमहव्वय धरणधीर । जे समिदिगुत्तिपालणहिं वीर ॥ ४ ॥
जे वड्ढहिं देह विरत्तचित्त । जे रायरोसभयमोहचत्त ।
जे कुगइहि संवरु विगयलोह । जे दुरियविणासणकामकोह ॥ ५ ॥
जे जल्लमल्लतणलित्त गत्त । आरंभ परिग्गह जे विरत्त ।
जे तिण्णकाल बाहर गमंति । छट्ठट्ठम दसमउ तउचरंति ॥ ६ ॥
जे इक्कगास दुइगास लिंति । जे णीरसभोयण रइ करंति ।
ते मुणिवर वंदउँ ठियमसाण । जे कम्म डहइवरसुक्कझाण ॥ ७ ॥
बारहविह संजम जे धरंति । जे चारिउ विकहा परिहरंति ॥
बावीस परीसह जे सहंति ॥ संसारमहण्णउ ते तरंति ॥ ८ ॥
जे धम्मबुद्ध महियलिथुणंति । जे काउस्सग्गो णिस गमंति ।
जे सिद्धविलासणि अहिलसंति । जे पक्खमास आहार लिंति ॥ ९ ॥
गोदूहण जे वीरासणीय । जे धणुह सेज वज्जासणीय ।
जे तवबलेण आयास जंति । जे गिरिगुहकंदर विवर थंति ॥ १० ॥

जे सत्तुमित्त समभावचित्त । ते मुणिवर वंदउं दिढचरित्त ।
चउवीसह गंथह जे विरत्त । ते मुणिवरवंदउं जगपवित्त ॥ ११ ॥
जे सुज्झाणिज्झा एकचित्त । वंदामि महारिसि सोक्खपत्त ।
रयणत्तयरंजिय सुद्ध भाव । ते मुणिवर वंदउं ठिदिसहाव ॥ १२ ॥

घत्ता ।

जे तपसूरा, संजमधीरा, सिद्धवधूअणुराईया ।
रयणत्तयरंजिय, कम्मह गंजिय, ते रिसिवर मइ झाईया ॥ १३ ॥
ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो
महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

अथ देवशास्त्रगुरुकी भाषा पूजा ।

अडिल छंद ।

प्रथमदेव अरहंत सुश्रुतसिद्धांतजू ।
गुरु निरग्रंथ महन्त मुकतिपुरपन्थजू ॥

तीन रतन जगमाहिं सो ये भवि ध्याइये।
तिनकी भक्तिप्रसाद परमपद पाइये ॥ १ ॥

दोहा—पूजों पद अरहंतके, पूजों गुरुपद सार।
पूजों देवी सरस्वती, नितप्रति अष्टप्रकार ॥ २ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।
ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।
ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

गीता छन्द।

सुरपति उरगनरनाथ तिनकर, बन्दनीक सुपदप्रभा।
अति शोभनीक सुवरण उज्जल, देख छवि मोहित सभा ॥
वर नीर क्षीरसमुद्रघटभरि, अग्र तसु बहुविधि नचूं।
अरहंत श्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ १ ॥

दोहा—मलिनवस्तु हर लेत सब, जलस्वभाव मलछीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जे त्रिजग उदरमझार प्रानी, तप्त अति दुद्धर खरे।
तिन अहितहरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे ॥
तसु भ्रमरलोभित घ्राण पावन, सरस चंदन घिसि सचूं।
अरहंत श्रुतसिद्धांतगुरु निरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ २ ॥

दोहा—चंदन शीतलता करै, तपतवस्तु परवीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ २ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

यह भवसमुद्र अपार तारण,-के निमित्त सुविधि ठई।
अति दृढ परमपावन जथारथ, भक्ति वर नौका सही ॥
उज्जल अखंडित सालि तंदुल, पुंज धरि त्रयगुण जचूं।
अरहंत श्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ३ ॥

दोहा—तंदुल सालि सुगंधि अति, परम अखंडित बीन।

जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

जे विनयवंत सुभव्यउरअंबुजप्रकाशन भान हैं।
जे एकमुखचारित्र भाषत, त्रिजगमाहिं प्रधान हैं ॥
लहि कुंदकमलादिक पहुप, भव भव कुवेदनसों बचूं।
अरहंतश्रुतसिद्धांतगुरुनिरगूंथ नितपूजा रचूं ॥ ४ ॥

दोहा—विविधभांति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन।
तासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

अति सबल मदकंदर्प जाको, क्षुधा उरग अमान है।
दुस्सह भयानक तासु नाशनको सु गरुडसमान है ॥
उत्तम छहों रसयुक्त नित नैवेद्य करि घृतमें पचूं।
अरहंतश्रुतसिद्धांतगुरुनिरगूंथ नितपूजा रचूं ॥ ५ ॥

दोहा—नानाविध संयुक्तरस, व्यंजन सरस नवीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय चरुं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जे त्रिजग उद्यम नाश कीने मोहतिमिर महाबली।
तिहिकर्मघाती ज्ञानदीपप्रकाशजोति प्रभावली ॥
इह भांति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजनमें खचूं।
अरहंतश्रुतसिद्धांतगुरुनिरग्रंथ नितपूजा रचूं ॥ ६ ॥

दोहा—स्वपरप्रकाशक जोति अति, दीपक तमकरि हीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

जो कर्म—ईंधन दहन अग्निसमूह सम उद्धत लसै।
वर धूप तासु सुगंधि ताकरि सकलपरिमलता हंसै ॥
इह भांति धूप चढाय नित, भवज्वलनमाहिं नहीं पचूं।

अरहंतश्रुतसिद्धांतगुरुनिरगूंथ नितपूजा रचूं ॥ ७ ॥

दोहा—अग्निमाहिं परिमल दहन, चंदनादि गुणलीन ।
जासों पूजों परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

लोचन सुरसना घ्रान उर, उत्साहके करतार हैं ।
मोपै न उपमा जाय वरणी, सकलफलगुणसार हैं ॥
सो फल चढावत अर्थ पूरन, परम अमृतरस सचूं ॥
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु निरगूंथ नितपूजा रचूं ॥ ८ ॥

दोहा—जे प्रधान फल फलविषै, पंचकरण—रसलीन ।
जासों पूजों परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूं ।
वर धूप निरमल फल विविध, बहुजनमके पातक हरूं ॥

इहभांति अर्घ चढाय नित भवि, करत शिवपंकति मचूं ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु निरगूंथ नितपूजा रचूं ॥ ९ ॥

दोहा—वसुविधि अर्घ संजोयकै, अति उछाह मन कीन ।
जासों पूजों परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

देवशास्त्रगुरु रतन शुभ, तीनरतनकरतार ।
भिन्न भिन्न कहुं आरती, अल्प सुगुणविस्तार ॥ १ ॥

पद्धरीछन्द ।

चउकर्मांकि त्रेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादशदोषराशि ।
जे परम सगुण हैं अनंत धीर, कहवतके छ्यालिस गुण गंभीर ॥ २ ॥
शुभ समवसरणशोभा अपार, शत इंद्र नमत कर सीस धार ।
देवाधिदेव अरहंत देव, बंदों मनवचतनकरि सु सेव ॥ ३ ॥

जिनकी धुनि है ओंकाररूप, निरअक्षरमय महिमा अनूप।
दश अष्ट महाभाषा समेत, लघुभाषा सात शतक सुचेत ॥ ४ ॥
सो स्यादवादमय सप्तभंग, गणधर गूंथे बारह सु अंग।
रवि शशि न हरै सो तम हराय, सो शास्त्र नमों बहु प्रीति ल्याय ॥ ५ ॥
गुरु आचारज उवझाय साध, तन नगन रतनत्रयनिधि अगाध।
संसारदेहवैराग धार, निरवांछि तपैं शिवपद निहार ॥ ६ ॥
गुण छत्तिस पच्चिस आठवीस, भवतारनतारन जिहाज ईस।
गुरुकी महिमा वरनी न जाय, गुरुनाम जपों मनवचनकाय ॥ ७ ॥
सोरठा—कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति विना सरधा धरै।
'द्यानत' सरधावान, अजर अमरपद भोगवै ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूचना—आगे जिस भाईको निराकुलता स्थिरता हो, वह नीचे लिखे मजुसार बीस तीर्थंकरोंकी भाषा पूजा करै। यदि स्थिरता नहीं हो, तो इस पूजाके आगे पत्र १८ में जो अर्घ लिखा है, उसको पढ़कर अर्घ चढ़ावै।

बीसतीर्थंकर पूजा भाषा।

दीप अढाई मेरु पन, अब तीर्थंकर बीस।
तिन सबकी पूजा करूं, मनवचतन धरि सीस ॥ १ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरा ! अत्र अवतरत अवतरत । संवौषट् ।
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरा ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः ।
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरा ! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत । वषट् ।

इंद्रफणींद्रनरेंद्रवंद्य, पद निर्मलधारी ।
शोभनीक संसार, सार गुण हैं अविकारी ॥
क्षीरोदधिसम नीरसों (हो), पूजों तृषा निवार ॥
सीमंधर जिन आदि दे, बीस विदेहमंझार ॥
श्रीजिनराज हो भव, तारणतरणजिहाज ॥ १ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

(इस पूजामें यदि बीस पुंज करना हो, तो इस प्रकार मंत्र बोलना चाहिये)

ओं ह्रीं सीमन्धर–युगंधर–बाहु–सुबाहु–संजात–स्वयंप्रभ–ऋषभानन–अनंतवीर्य–सूरप्रभ–विशालकीर्ति–वज्रधर–चन्द्रानन–चन्द्रबाहु–भुजंगम–ईश्वर–नेमिप्रभ–वीरषेण–महाभद्र–देवयशोऽजितवीर्येति विंशतिविद्यमानतीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

तीनलोकके जीव, पाप आताप सताये ।
तिनकों साता दाता, शीतल वचन सुहाये ॥
बावन चंदनसों जजूं (हो), भ्रमनतपन निरवार । सीमं० ॥२॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥ (इसके स्थानमें यदि इच्छा हो, तो बडा मंत्र पढ़ै)

यह संसार अपार, महासागर जिनस्वामी ।
तातैं तारे बडी भक्ति–नौका जग नामी ॥
तंदुल अमल सुगंधसों (हो) पूजों तुम गुणसार । सीमं० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० ॥ ३ ॥

भविक-सरोज-विकाश, निंद्यतमहर रविसे हो ।

जतिश्रावकआचार कथनको, तुम्हीं बडे हो ॥
फूलसुवास अनेकसों (हो), पूजों मदनप्रहार । सीमं० ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व० ॥ ४ ॥
कामनाग विषधाम,—नाशको गरुड कहे हो ।
छुधा महादवज्वाल, तासुको मेघ लहे हो ।
नेवज बहुघृत मिष्टसों (हो), पूजों भूखविडार । सीमं० ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व० ॥ ५ ॥
उद्यम होन न देत, सर्व जगमाहिं भर्यौ है ।
मोह महातम घोर, नाश परकाश कर्यौ है ॥
पूजों दीपप्रकाशसों (हो) ज्ञानज्योतिकरतार । सीमं० ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व० ॥ ६ ॥
कर्म आठ सब काठ,—भार विस्तार निहारा ।
ध्यान अगनिकर प्रगट, सरव कीनो निरवारा ॥

धूप अनूपम खेवतें (हो),दुःख जलैं निरधार । सीमं ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

मिथ्यावादी दुष्ट, लोभऽहंकार भरे हैं ।
सबको छिनमें जीत, जैनके मेर खरे हैं ।
फल आति उत्तमसों जजों (हो),वांछितफलदातार । सी० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल आठों दर्व, अरघ कर प्रीत धरी है ।
गणधर इंद्रनिहूतैं, थुति पूरी न करी है ।
'द्यानत' सेवक जानके (हो), जगतैं लेहु निकार । सीमं०॥ ९ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ जयमाला आरती ।

सोरठा ।

ज्ञानसुधाकर चंद, भविकखेतहित मेघ हो ।
भ्रमतमभान अमंद, तीर्थंकर बीसों नमों ॥ १ ॥

चोपाइ ।

सीमंधर सीमंधर स्वामी । जुगमंधर जुगमंधर नामी ।
बाहु बाहु जिन जगजन तारे । करम सुबाहु बाहुबल दारे ॥ १ ॥
जात सुजात केवलज्ञानं । स्वयंप्रभू प्रभु स्वयं प्रधानं ।
ऋषभानन ऋषि आनन दोषं । अनंत वीरज वीरजकोषं ॥ २ ॥
सौरीप्रभ सौरीगुणमालं । सुगुण विशाल विशाल दयालं ।
वज्रधार भवगिरिवज्जर हैं । चन्द्रानन चन्द्रानन वर हैं ॥ ३ ॥
भद्रबाहु भद्रनिके करता । श्रीभुजंग भुजंगम हरता ।
ईश्वर सबके ईश्वर छाजैं । नेमिप्रभु जस नेमि विराजैं ॥ ४ ॥
वीरसेन वीरं जग जानै । महाभद्र महाभद्र बखानै ।
नमों जसोधर जसधरकारी । नमों अजितवीरज बलधारी ॥ ५ ॥
धनुष पांचसै काय विराजै । आव कोडिपूरव सब छाजै ।
समवसरण शोभित जिनराजा । भवजलतारनतरन जिहाजा ॥ ६ ॥

सम्यक रत्नत्रयनिधिदानी । लोकालोकप्रकाशक ज्ञानी ।
शत इंद्रनिकरि बंदित सोहैं । सुरनर पशु सबके मन मोहैं ॥ ७ ॥

दोहा ।

तुमको पूजै बंदना, करै धन्य नर सोय ।
'द्यानत' सरधा मन धरै, सो भी धरमी होय ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ विद्यमान वीसतीर्थंकरोंका अर्घ ।

उदकचन्दनतन्दलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनराजमहं यजे ॥१॥

ओं ह्रीं सीमंधरयुग्मंधरबाहुसुबाहुसंजातस्वयंप्रभऋषभाननअनन्तवीर्यसूरप्रभविशालकीर्ति वज्रधरचन्द्राननचन्द्रबाहुभुजंगमईश्वरनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रदेवयशअजितवीर्येति विंशति-विद्यमानतीर्थंकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

अथ अकृत्रिम चैत्यालयोंका अर्घ।

कृत्याऽकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान्नित्यं त्रिलोकींगतान्।
बन्दे भावनव्यंतरान्द्युतिवरान्कल्पामरान्सर्वगान्।
सद्गन्धाक्षतपुष्पदामचरुकैर्दीपैश्च धूपैः फलै-
र्नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणां शांतये ॥ १ ॥

ओं ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धिजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु।
यावंति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि बन्दे जिनपुंगवानाम् ॥
अवनितलगतानां कृत्रिमाऽकृत्रिमाणां
वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम्।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां
जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥ २ ॥
जम्बूधातकिपुष्करार्द्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये भवा-

श्चन्द्राम्भोजशिखण्डिकण्ठकनकप्रावृड्घनाभाजिनः ।
सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मेन्धना
भूतानागतवर्त्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥ ३ ॥
श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचिके कुण्डले मानुषांके ।
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके
ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥ ४ ॥
द्वौ कुन्देन्दुतुषारहारधवलौ द्वाविन्द्रनीलप्रभौ
द्वौ बन्धूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ ।
शेषाः षोडशजन्ममृत्युरहिताः संतप्तहेमप्रभा-
स्ते संज्ञानदिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छंतु नः ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं त्रिलोकसंबन्धिअकृत्रिमचैत्यालयेभ्यो अर्घं निर्वपामि ॥
इच्छामि भंते—चेइयभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ अह-

लोय तिरियलोय उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि । तीसुवि लोएसु भवणवासियवाणविंतरजोयसियकप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धुव्वेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ह्लाणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति । अहमवि इह संतो तत्थ संताइ णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

(इत्याशीर्वादः । परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ पौर्वाह्लिकमाध्याह्लिकआपराह्लिकदेववंदनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावंदनास्तवसमेतं श्रीपंचमहागुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्

(कायोत्सर्ग करना और नीचे लिखे मंत्रका नौवार जप करना)

(जप करते समय आठ दिशाओंमें आठ पांखुडी (दल) वाले हृदय कमलकी मनमें कल्पना करनी चाहिये । फिर उन पाखुंडी और कर्णिकाके वीचमें प्रत्येक पर पहिले उच्छ्वासमें ' णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं ' ये दो पद, दूसरे उच्छ्वासमें ' णमो आइरीयाणं णमो उवज्झायाणं' ये दो पद और तीसरे उच्छ्वासमें 'णमो लोए सव्वसाहूणं ' यह एक पद उच्चारण करना चाहिये, इसतरह सत्ताईस उच्छ्वासमें नौवार जाप देना उचित है ।)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥
ताव कायं पावकम्मं दुच्चारियं वोस्सरामि ।

अथ सिद्धपूजा प्रारभ्यते ।

ऊर्ध्वाधो रयुतं सबिन्दुसपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं
वर्गापूरितदिग्गताम्बुजदलं तत्संधितत्त्वान्वितं ।

अंतःपत्रतटेष्वनाहतयुतं ह्रींकारसंवेष्टितं

देवं ध्यायाति यः स मुक्तिसुभगो वैरीभकण्ठरिवः ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र ! अवतर अवतर । संवौषट् ।

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

निरस्तकर्मसम्बंधं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् ।

बंदेऽहं परमात्मानममूर्त्तमनुपद्रवम् ॥ १ ॥

(सिद्धयंत्रकी स्थापना)

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं

हीनादिभावरहितं भववीतकायम् ।

रेवापगावरसरो-यमुनोद्भवानां

नीरैर्यजे कलशगैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ १ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

आनंदकंदजनकं घनकर्ममुक्तं

सम्यक्त्वशर्मगारिमं जननार्तिवीतम् ।
सौरभ्यवासितभुवं हरिचंदनानां
गंधैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ २ ॥
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्व० ॥
सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं
सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालम् ।
सौगंध्यशालिवनशालिवराक्षतानां
पुंजैर्यजे शशिनिभैर्वरसिद्धचक्रं ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० ॥ ३ ॥
नित्यं स्वदेहपरिमाणमनादिसंज्ञं
द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् ।
मंदारकुंदकमलादिवनस्पतीनां
पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व० ॥ ४ ॥

ऊर्ध्वस्वभावगमनं सुमनोऽव्यपेतं
ब्रह्मादिबीजसहितं गगनावभासम् ।
क्षीरान्नसाज्यवटकै रसपूर्णगर्भै-
र्नित्यं यजे चरुवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुद्रोगविध्वंसनाय नैवेद्यं निर्व० ॥ ५ ॥

आतंकशोकभयरोगमदप्रशांतं
निर्द्वंद्वभावधरणं महिमानिवेशम् ।
कर्पूरवर्तिबहुभिः कनकावदातै-
र्दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व० ॥ ६ ॥

पश्यन्समस्तभुवनं युगपन्नितांतं
त्रैकाल्यवस्तुविषये निविडप्रदीपम् ।

सद्द्रव्यगन्धघनसारविमिश्रितानां
धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

सिद्धासुरादिपतियक्षनरेन्द्रचक्रै-
र्ध्येयं शिवं सकलभव्यजनैः सुबन्द्यम् ।
नारिंगपूगकदलीफलनारिकेलैः
सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रतगणैः संगं वरं चन्दनं
पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयं रम्यं चरुं दीपकं ।
धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वांछितम् ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं
सूक्ष्मस्वभावपरमं यदनन्तवीर्यम् ।
कर्मौघकक्षदहनं सुखशस्यबीजं
वन्दे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥ १० ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १० ॥

त्रैलोक्येश्वरवन्दनीयचरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं
यानाराध्य निरुद्धचण्डमनसः सन्तोऽपि तीर्थंकराः ।
सत्सम्यक्त्वविबोधवीर्यविशदाऽव्याबाधताद्यैर्गुणै-
र्युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥ ११ ॥

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ जयमाला ।

विराग सनातन शांत निरंश । निरामय निर्भय निर्मल हंस ॥

नि० ११

सुधाम विबोधनिधान विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १ ॥
विदूरितसंसृतभाव निरंग । समामृतपूरित देव विसंग ॥
अबंध कषायविहीन विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ २ ॥
निवारितदुष्कृतकर्मविपाश । सदामलकेवलकेलिनिवास ॥
भवोदधिपारग शांत विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ३ ॥
अनंतसुखामृतसागर धीर । कलंकरजोमलभूरिसमीर ॥
विखण्डितकाम विराम विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ४ ॥
विकारविवर्जित तर्जितशोक । विबोधसुनेत्रविलोकितलोक ॥
विहार विराव विरंग विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ५ ॥
रजोमलखेदविमुक्त विगात्र । निरंतर नित्य सुखामृतपात्र ॥
सुदर्शनराजित नाथ विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ६ ॥
नरामरवंदित निर्मलभाव । अनंतमुनीश्वरपूज्य विहाव ॥
सदोदय विश्वमहेश विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ७ ॥

५ २२

विदंभ वितृष्ण विदोष विनिद्र। परापरशंकर सार वितंद्र ॥
विकोप विरूप विशंक विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ८ ॥
जरामरणोज्झित वीतविहार। विचिंतित निर्मल निरहंकार ॥
अचिंत्यचरित्र विदर्प विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ९ ॥
विवर्ण विगंध विमान विलोभ। विमाय विकाय विशब्द विशोभ ॥
अनाकुल केवल सर्व विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १० ॥

घत्ता।

असमसमयसारं चारुचैतन्यचिह्नं, परपरणतिमुक्तं पद्मनंदींद्रवंद्यम्।
निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं, स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥ ११ ॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अडिल्ल छंद।

अविनाशी अविकार परमरसधाम हो, समाधान सर्वज्ञ सहज अभि-

राम हो। शुद्धबोध अविरुद्ध अनादि अनंत हो, जगतशिरोमणि सिद्ध सदा जयवंत हो ॥ १ ॥ ध्यानअगनिकर कर्म कलंक सबै दहे, नित्य निरंजनदेव सरूपी ह्वै रहे। ज्ञायकके आकार ममत्वनिवारिकैं, सो परमातम सिद्ध नमूं सिर नायकैं ॥ २ ॥

दोहा

अविचलज्ञानप्रकाशतें, गुण अनंतकी खान।
ध्यान धरेसौं पाइए, परमसिद्ध भगवान ॥ ३ ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ सिद्धपूजाका भावाष्टक।

निजमनोमणिभाजनभारया समरसैकसुधारसधारया।
सकलबोधकलारमणीयकं सहजसिद्धमहं परिपूजये। १। जलम्।
सहजकर्मकलंकविनाशनैरमलभावसुभावितचंदनैः।
अनुपमानगुणावलिनायकं सहजसिद्धमहं परिपूजये। २। चंदनं।

सहजभावसुनिर्मलतंदुलैः सकलदोषविशालविशोधनैः ।
अनुपरोधसुबोधनिधानकं सहजसिद्धमहं परिपूजये । ३ । अक्षतान् ।
समयसारसुपुष्पसुमालया सहजकर्मकरेण विशोधया ।
परमयोगबलेन वशीकृतं सहजसिद्धमहं परिपूजये । ४ । पुष्पं ।
अकृतबोधसुदिव्यनिवेद्यकैर्विहितजातजरामरणांतकैः, ।
निरवधिप्रचुरात्मगुणालयं सहजसिद्धमहं परिपूजये । ५ । नैवेद्यं ।
सहजरत्नरुचिप्रतिदीपकैः रुचिविभूतितमःप्रविनाशनैः ।
निरवधिस्वविकाशविकाशनैः सहजसिद्धमहं परिपूजये । ६ । दीपं ।
निजगुणाक्षयरूपसुधूपनैः स्वगुणघातिमलप्रविनाशनैः ।
विशदबोधसुदीर्घसुखात्मकं सहजसिद्धमहं परिपूजये । ७ । धूपं ।
परमभावफलावलिसम्पदा सहजभावकुभावविशोधया ।
निजगुणाऽऽस्फुरणात्मनिरंजनं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥८॥ फलम्
नेत्रोन्मीलिविकाशभावनिवहैरत्यंतबोधाय वै

वार्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैः ।
यश्चिंतामणिशुद्धभावपरमज्ञानात्मकैरर्चयेत्
सिद्धं स्वादुमबाधबोधमचलं संचर्चयामो वयं ॥ १ ॥ अर्घ्यं ।

सोलहकारणका अर्घ ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनहेतुमहं यजे ॥ १ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

दशलक्षणधर्मका अर्घ ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनधर्ममहं यजे ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्भूतोत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्यदशलाक्षणिकधर्मेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

रत्नत्रयका अर्घ ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनरत्नमहं यजे ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टविधाचारसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशप्रकारसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

अथ पंचपरमेष्ठिजयमाला (प्राकृत)

मणुय–णाइंद-सुरधरियछत्तत्तया, पंचकल्लाणसुक्खावली पत्तया ॥
दंसणं णाण झाणं अणंतं बलं, ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मंगलं ॥ १ ॥
जेहिं झाणग्गिवाणेहि अइथड्ढयं, जम्मजरमरणणयरत्तयं दड्ढयं ॥
जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं, ते महा दिंतु सिद्धा वरं णाणयं ॥ २ ॥
पंचहाचारपंचग्गिसंसाहया, बारसंगाइ सुथजलहिं अवगाहया ॥
मोक्खलच्छी महंती महं ते सया, सूरिणो दिंतु मोक्खं गया संगया ॥
घोरसंसारभीमाडवीकाणणे, तिक्खवियरालणहपावपंचाणणे ॥

णट्ठमग्गाण जीवाण पहदेसया, बंदिमो ते उवज्झाय अम्हे सया ॥४॥
उग्गतवयरणकरणेहिं झीणं गया, धम्मवरझाणक्केकझाणं गया ।
णिब्भरं तवसिरीए समालिंगया, साहओ ते महामोक्खपहमग्गया ॥
एण थोत्तेण जो पंचगुरु बंदए । गुरुयसंसारघणवेल्लि सो छिंदए ॥
लहइ सो सिद्धसुक्खाइ वरमाणणं, कुणइकम्मिंधणं पुंजपज्जालणं ॥

आर्य्या ।

अरिहा सिद्धाइरिया, उवझाया साहु पंचपरमेट्ठी ।
एयाण णमुकारो, भवे भवे मम सुहं दिंतु ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपंचपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

इच्छामि भंते पंचगुरुभत्ति काओसग्गो कओ, तस्सालोचेओ अट्ठमहापाडिहेरसंजुत्ताणं अरहंताणं । अट्ठगुणसंपण्णाणं उड्ढलोयम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं । अट्ठपवयणमाउसंजुत्ताणं आइरियाणं । आयारादिसुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं । तिरयणगुणपालणरयाणं

सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि पूजेमि बंदामि णमस्सामि, दुःक्ख-क्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं। इत्याशीर्वादः।

[पुष्पांजलिं क्षिपेत्।]

अथ शान्तिपाठः प्रारभ्यते।

(शान्तिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्पवृष्टि करते रहना चाहिये।)

दोधकवृत्तम्।

शान्तिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रम्।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम्॥ १॥
पंचममीप्सितचक्रधराणां, पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च।
शान्तिकरं गणशान्तिमभीप्सुः, षोडशतीर्थकरं प्रणमामि॥ २॥
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ।
आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः॥ ३॥

तं जगदर्चितशान्तिजिनेन्द्रं शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं मह्यमरं पठते परमां च ।

वसन्ततिलका ।

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थंकराः सततशान्तिकरा भवन्तु

इन्द्रवज्रा ।

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥ ६ ॥

स्रग्धरावृत्तम् ।

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः ।
काले काल च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ॥
दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके ।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अनुष्टुप् ।

प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्कराः ।
कुर्वन्तु जगतः शान्तिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥ ८ ॥

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

अथेष्टप्रार्थना ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्य्यैः, सद्वृत्तानां गुणगण-कथा दोषवादे च मौनम् । सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे, सम्पद्यंतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ ९ ॥

आर्यावृत्तम् ।

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र! तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥ १० ॥
अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं ।
तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुःक्खक्खयं दिंतु ॥ ११ ॥

दुःक्खखओ कम्मखओ समाहिमरणं च बोहिलाहो य ।
मम होउ जगतबंधव तव जिणवर चरणसरणेण ॥ १२ ॥
त्रिभुवनगुरो ! जिनेश्वर ! परमानंदैककारण कुरुष्व ।
मयि किंकरेऽत्र करुणां यथा तथा जायते मुक्तिः ॥ १३ ॥
निर्विण्णोहं नितरामर्हन् ! बहुदुक्खया भवस्थित्या ।
अपुनर्भवाय भवहर ! कुरु करुणामत्र मयि दीने ॥ १४ ॥
उद्धर मां पतितमतो विषमाद् भवकूपतः कृपां कृत्वा ।
अर्हन्नलमुद्धरणे त्वमसीति पुनः पुनर्वच्मि ॥ १५ ॥
त्वं कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरणं जिनेश ! तेनाहं ।
मोहरिपुदालितमानं फूत्कारं तव पुरः कुर्वे ॥ १६ ॥
ग्रामपतेरपि करुणा, परेण केनाप्युपद्यते पुंसि ।
जगतां प्रभो ! न किं तव, जिन ! मयि खलु कर्मभिः प्रहते ॥१७॥
अपहर मम जन्म दयां कृत्वेत्येकवचासि वक्तव्ये ।

तेनातिदग्ध इति मे देव ! बभूव प्रलापित्वं ॥ १८ ॥
तव जिनवर ! चरणाब्जयुगं, करुणामृतशीतलं यावत् ।
संसारतापतप्तः करोमि हृदि तावदेव सुखी ॥ १९॥
जगदेकशरण ! भगवन् ! नौमि श्रीपद्मनंदितगुणौघ !
किं बहुना ? कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने ॥ २० ॥

[परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्]

अथ विसर्जनम् ।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥
आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनं ।
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥
मंत्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥

आहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथाक्रमं ।
ते मयाभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यान्तु यथास्थितिं ॥ ४ ॥

इति नित्यपूजाविधानं समाप्तं ॥

अथ भाषास्तुतिपाठ ।

तुम तरणतारण भवनिवारण, भविकमनआनंदनो ।
श्रीनाभिनंदन जगतबंदन, आदिनाथ निरंजनो ॥ १ ॥
तुम आदिनाथ अनादि सेऊं, सेय पदपूजा करूं ।
कैलासगिरिपर रिषभजिनवर, पदकमल हिरदे धरूं ॥ २ ॥
तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली ।
यह विरुद सुनकर सरन आयो, कृपा कीजे नाथजी ॥ ३ ॥
तुम चंद्रवदन सु चन्द्रलच्छन, चंद्रपुरि परमेश्वरो ।
महासेननंदन, जगतबंदन, चंद्रनाथ जिनेश्वरो ॥ ४ ॥

तुम शांति पांच कल्याण पूजों, शुद्धमनवचकायजू ।
दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन, विघन जाय पलायजू ॥ ५ ॥
तुम बालब्रह्म विवेकसागर, भव्यकमलविकाशनो ।
श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो ॥ ६ ॥
जिन तजी राजुल राजकन्या, कामसैन्या वश करी ।
चारित्ररथ चढि भये दूलह, जाय शिवरमणी वरी ॥ ७ ॥
कंदर्प दर्प सुसर्पलच्छन, कमठ शठ निर्मद कियो ।
अश्वसेननन्दन जगतबंदन, सकलसंघ मंगल कियो ॥ ८ ॥
जिन धरी बालकपणे दीक्षा, कमठमानविदारकैं ।
श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रके पद, मैं नमों शिरधारकैं ॥ ९ ॥
तुम कर्मघाता मोखदाता, दीन जानि दया करो ।
सिद्धार्थनंदन जगतबंदन महावीर जिनेश्वरो ॥ १० ॥
छत्र तीन सोहैं सुर नर मोहैं, वीनती अवधारिये ।

कर जोडि सेवक वीनवै प्रभु, आवागमन निवारिये ॥ ११ ॥
अब होउ भव भव स्वामी मेरे, मैं सदा सेवक रहों।
कर जोड यो वरदान मांगों, मोक्षफल जावत लहों ॥ १२ ॥
जो एकमाहीं एक राजै, एकमाहिं अनेकनो।
इक अनेककी नहीं संख्या, नमों सिद्ध निरंजनो ॥ १३ ॥

चौपाई।

मैं तुम चरणकमलगुणगाय। बहुविध भक्ति करी मन लाय॥
जनम जनम प्रभु पाऊं तोहि। यह सेवाफल दीजे मोहि ॥ १४ ॥
कृपा तिहारी ऐसी होय। जामन मरन मिटावो मोय।
बारबार मैं विनती करूं। तुम सेयें भवसागर तरूं ॥ १५ ॥
नाम लेत सब दुख मिटजाय। तुम दर्शन देख्या प्रभु आय।
तुम हो प्रभु देवनके देव। मैं तो करूं चरण तव सेव ॥ १६ ॥
मैं आयो पूजनके काज। मेरो जन्म सफल भयो आज।

पूजा करकैं नवाऊं शीश । मुझ अपराध क्षमहु जगदीश ॥ १७ ॥

दोहा ।

सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान ।
मो गरीबकी वीनती सुन लीज्यो भगवान ॥ १८ ॥
दर्शन करते देवका, आदि मध्य अवसान ।
स्वर्गनके सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान ॥ १९ ॥
जैसी महिमा तुमविषै, और धरै नहिं कोय ।
जो सूरजमें ज्योति है, तारनमें नहिं सोय ॥ २० ॥
नाथ तिहारे नामतैं, अघ छिनमाहिं पलाय ।
ज्यों दिनकर परकाशतैं, अंधकार विनशाय ॥ २१ ॥
बहुत प्रशंसा क्या करूं, मैं प्रभु बहुत अजान ।
पूजाविधि जानू नहीं, सरन राखि भगवान ॥ २२ ॥

इति भाषास्तुतिपाठ समाप्त ।

अथ संस्कृत पंचमेरुपूजा ।

संवौषडाहूय निवेश्य ठाभ्यां सान्निध्यमानीय वषड्पदेन ।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ॥ १ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुस्थितजिनचैत्यालयस्थजिनबिंब ! अत्रावतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अथाष्टकं ।

सुसिंधुमुख्याखिलतीर्थसार्था,-बुभिः शुभांभोजरजोभिरामैः ।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां, यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ॥ २॥

आद्यः सुदर्शनो मेरुर्विजयश्चाचलस्तथा ।
चतुर्थो मंदरो नाम विद्युन्माली सुपंचमः ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुस्थचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूरपूरस्फुरदत्युदारैः सौरभ्यसारैर्हरिचंदनाद्यैः ।

श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं श्रीपंचमेरुस्थचैत्यालयजिनबिंबेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

शाल्यक्षतैः कैरवकुड्मलानां गुणत्रयेण भ्रमभावहद्भिः ।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां, यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः ॥ अक्षतान्
प्रधानसंतानकमुख्यपुष्पसुगंधितागच्छदतुच्छभृंगैः ।
श्रीपंचमेरुस्थजिनालयानां यजाम्यशीतिप्रतिमाः समस्ताः । पुष्पं ॥५॥
सद्यस्तनैः क्षीरघृतेक्षुमुख्यैः सद्व्यभव्यैश्चरुभिः सुगंधैः । श्रीपंच० नैवेद्यं
तमोविनाशप्रकटीकृतार्थैर्दीपैरशेषज्ञवचोनुरूपैः । श्रीपंच० । दीपं ॥६॥
स्वपापरक्षःपरिणाशधूम्रैरिवोरुकृष्णागरुधूपधूम्रैः । श्री पंच० । धूपं ॥
नारिंगमुख्याखिलवृक्षपक्वफलैः सुगंधैः सरसैः सुवर्णैः । श्रीपंच० । फलं
वार्गंधपुष्पाक्षतदीपधूपनैवेद्यदूर्वाफलवद्भिरर्घैः । श्रीपंच० । अर्घं ॥

अथ जयमाला ।

जिनमज्जणपीठं मुनिगणईठं असी चैत्यमंदिरसहितं ।
बंदौं गिरिनायक महिमा लायक पंच मेरु तीरथमहितं ॥

चौपई ।

जंबू दीप अधिक छवि छाजै, मध्य सुदरशन मेरु विराजै ॥
उन्नत जोजन लक्षप्रमाणं, छत्रोपम शिर ऋजुक विमानं ॥
दीप धातुकी खंड मंझारं, मेरु युगम आगम अनुसारं ॥
विजय नाम पूरव दिशि सोहै, पश्चिम भाग अचल मन मोहै ॥
पुष्कराद्धमें भी फुनि यो ही, मंदर विद्युन्माली सोही ।
चारोंकी इकसार ऊंचाई, सहस असी चउ योजन गाई ॥ ४ ॥
पांचों मेरु महागिरि ये ही, अचल अनादि निधन थिर जेही ।
मूल वज्र मधि मणिमय भासै, ऊपर कनक मई तम नासै ॥ ५ ॥

गिरि गिरि प्रति वन चार वखाने, वन वन देवल चार रवाने ।
चामीकर मय चहुंदिशि राजै, रतनमई जोती रवि लाजै ॥ ६ ॥
समोशरण रचना शुभ धारै, धुज पाननसों पाप विडारै ।
सौ योजन आयाम गणीजै, व्यास तासमें अर्ध भणीजै ॥ ७ ॥
तुंग पौनसौ योजन भारे, भद्रसालके जिन गृह सारे ।
ऊपर अर्ध अर्ध सब जानो, पांडुक वन पर्यंत प्रमानो ॥ ८ ॥
पांचों मेरुनिका सुन लीजै, सुन वर्णन सरधा यह कीजे ।
शोभा वर्णत पार न लहिये, बुधि ओछी कैसैं करि कहिये ॥ ९ ॥
विंब अठोतरसो इक माहीं, रतन मई देखत दुख जाई ।
आनन जो अरिविंद लसै हैं, लक्षण व्यंजन सहित हसै हैं ॥ १० ॥
तीन पीठ पर शोभित ऐसैं, जगशिर सिद्ध विराजत जैसैं ।
पद्मासन वैराग्य बढावैं, सुर विद्याधर पूजन आवैं ॥ ११ ॥
महिमा कोन कहै जिन केरी, त्रिभुवन नैनानंद जिनेरी ।

धनुष पांचसै तन चित चोरैं, बंदों भाव सहित कर जोरैं ॥ १२ ॥
गज दंतादि शिखर परके हैं, कृत्य अकृत्रिम जिन गृह जेहैं ।
अरु त्रिभुवनमें प्रतिमा सारी, तिन प्रति धोक त्रिकाल हमारी ॥१३॥

घत्ता ।

भूधर प्रति जेहा करमन एहा, भक्तिविषै दृढ भव्य जनौ ।
करि पूजा सारी अष्टप्रकारी, पंचमेरु जयमाल भणौ ॥

इति पंचमेरुपूजा समाप्त ॥

अथ भाषा पंचमेरुपूजा प्रारभ्यते ।

गीताछंद ।

तीर्थंकरोंके न्हवनजलतैं, भये तीरथ शर्मदा,
तातैं प्रदच्छन देत सुरगन, पंचमेरनकी सदा ।
दो जलधि ढाईदीपमें सब, गनतमूल विराजही,
पूजौं असी जिनधाम प्रतिमा, होहि सुख, दुख भाजही ॥ १ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बंधिचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्रावतरावतर संवौषट् ।
ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बंधिचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बंधिचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अथाष्टक ।

चौपई आंचलीबद्ध (१५ मात्रा ।)

सीतलमिष्टसुवास मिलाय । जलसौं पूजौं श्रीजिनराय ॥
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥
पांचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमाको करों प्रनाम ॥
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ १ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जल केसरकरपूर मिलाय, गंधसौं पूजौं श्रीजिनराय ॥
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बंधिचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अमल अखंड सुगंध सुहाय, अच्छतसौं पूजौं जिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्योऽक्षतान् निर्वपामीति० ॥ ३ ॥

बरन अनेक रहे महकाय, फूलनसौं पूजौं जिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।
पांचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमाको करों प्रनाम ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं नि० ॥

मनबांछित बहु तुरत बनाय । चरुसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ५ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति०

तमहर उज्ज्वल ज्योति जगाय, दीपसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ६ ॥
ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो दीपं नि० ॥

खेऊं अगर अमल अधिकाय, धूपसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ७ ॥
ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो धूपं नि० ॥

सुरस सुवर्ण सुगंध सुभाय, फलसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ८ ॥
ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं नि० ॥

आठ दरबमय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ९ ॥
ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घ्यं नि० ॥

अथ जयमाला ।

सोरठा ।

प्रथम सुदर्शन स्वामि, विजय अचल मंदर कहा ।
विद्युन्माली नाम, पंचमेरु जगमें प्रगट ॥ १ ॥

वेसरी छंद ।

प्रथम सुदर्शन मेरु विराजै, भद्रशाल वन भूपर छाजै ।
चैत्यालय चारो सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी ॥ २ ॥
ऊपर पंच शतकपर सोहै, नंदनवन देखत मन मोहै ॥ चै० ३ ॥
साढे बासठ सहस उंचाई, वन सौमनस शोभै अधिकाई ॥ चै० ४ ॥
ऊंचा जोजन सहस छतीसं, पांडुकवन सोहै गिरिसीसं ॥ चै० ५ ॥
चारों मेरु समान बखाने, भूपर भद्रसाल चहुं जाने ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतनबंदना हमारी ॥ ६ ॥

ऊंचे पांच शतकपर भाखे, चारों नंदनवन अभिलाखे।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी ॥ ७ ॥
साढे पचपन सहस उतंगा, वन सौमनस चार बहुरंगा।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी ॥ ८ ॥
उच्च अठाइस सहस बताये, पांडुक चारों वन शुभ गाये।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन वंदना हमारी ॥ ९ ॥
सुर नर चारन बंदन आवैं, सो शोभा हम किह मुख गावैं।
चैत्यालय अस्सी सुखकारी, मनवचतन बंदना हमारी ॥ १० ॥

दोहा।

पंचमेरुकी आरती, पढै सुनै जो कोय।
'द्यानत,' फल जानै प्रभू, तुरत महासुख होय। ११।

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपा० ॥

(अर्घके बाद विसर्जन करना चाहिये।)

स्थानासनार्घ्यप्रतिपत्तियोग्यं, सद्भावसन्मानजलादिभिश्च ।
लक्ष्मीसुतागमनवीर्यसुदर्भगर्भैः, संस्थापयामि भुवनाधिपतिं जिनेंद्रं ॥

ओं ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम संनिहितो भव भव वषट् ॥

अथाष्टकं ।

तीर्थोदकैर्मणिसुवर्णघटोपनीतैः, पीठे पवित्रवपुषि प्रविकल्पितार्थैः ।
नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये चाष्टदिनानि भक्त्या ॥

ओं ह्रीं नदीश्वरद्वीपे पूर्वदिग्भागे एक अंजनगिरि—चतुर्दधिमुखा—ष्टरतिकरेतित्रयोदश-जिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा । ओं ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्भागे त्रयोदशजि-

इस पूजाके अष्टक आदिमें पाठांतर भी मिलता है और वह इसप्रकार है—

(१) आहूयसवौषडिति प्रणीत्य ताभ्या प्रतिष्ठाप्य सुनिष्ठितार्थान् ।
वषड्पदेनैव च सन्निधाय नंदीश्वरद्वीपजिनान्समर्चे ॥ १ ॥

(२) देवापगाद्युत्तमतीर्थनीरैः स्वच्छैः सुशीतैर्वरगंधमिश्रैः ।

नालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा । ओं ह्रीं नंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्भागे त्रयोदशजिना-
लयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा । ओं ह्रीं नंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिग्भागे त्रयोदशजिनाल-
येभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रीखंडकर्पूरसुकुंकुमाद्यैर्गंधैः सुगंधीकृतदिग्विभागैः[3] ।
नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये चाष्ट दिनानि भक्त्या ॥ चंदनं ।
शाल्यक्षतैरक्षतदीर्घगात्रैः सुनिर्मलैश्चंद्रकरावदातैः ।
नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये चाष्ट दिनानि भक्त्या ॥ अक्षतान्
अंभोजनीलोत्पलपारिजातैः[4] कदंबकुंदादितरुप्रसूनैः ।
नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये चाष्ट दिनानि भक्त्या ॥ पुष्पं ।
नैवेद्यकैः[5] कांचनपात्रसंस्थैर्न्यस्तैरुदस्तैर्हरिणासुहस्तैः । नंदी० । नैवेद्यं ।

(३) सचंदनै कुंकुमचंद्रमिश्रै प्राचुर्यगंधाहृतभृंगवृंदैः ।
(४) मंदारजातीवकुलाब्जकुंदसत्केतकीचंपकमुख्यपुष्पै ।
(५) सन्मोदकै· खज्जकफेणिकाद्यै सौहालपूपैर्वरमंडकैश्च ।

दीपोत्करैर्ध्वस्ततमोवितानैरुद्योतिताशेषपदार्थजातैः। नंदी०। दीपं।
कर्पूरकृष्णागरुचंदनाद्यैर्धूपैर्विचित्रैर्वरगंधयुक्तैः। नंदी०। धूपं।
लवंगनारिंगकपित्थपूगश्रीमोचचोचादिफलैः पवित्रैः। नंदी०। फलं।
श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या।
यजे त्रिकालोद्भवजैनबिंबान् भक्त्या स्वकर्मक्षयहेतवेऽहं॥ अर्घं।
श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रविकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या।
सद्भावनावासजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान्॥
ओं ह्रीं भावनामरजिनालयेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या।
जंब्वाख्यद्वीपस्थजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान् प्रयजे मनोज्ञान्॥

(६) कर्पूरकृष्णागरुचंदनादिसच्चूर्णजैरुत्तमधूपवर्गैः।

(७) सक्षीरगंधधवलाक्षतपुष्पकैश्च नैवेद्यदीपवरधूपफलैश्च सारैः।

ओं ह्रीं जंबूद्वीपस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रीचंदनाद्याक्षततोयमिश्रविकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।

श्रीधातकीखंडजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान् प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं धातकीखंडद्वीपस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रीचंदनाद्याक्षततोयमिश्रविकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।

श्रीपुष्करद्वीपजिनालयस्थान् जिनेन्द्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं पुष्करद्वीपस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं ॥

श्रीचंदनाद्याक्षततोयमिश्रविकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।

सत्कुंडलाद्रिस्थजिनालयस्थान् जिनेन्द्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं कुंडलगिरिद्वीपस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं ॥

श्रीचंदनाद्याक्षततोयमिश्रविकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।

श्रीमन्नगे वै रुचिके हि संस्थान् जिनेन्द्रबिंबान् प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं रुचिकगिरिस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं ॥

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्राविकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
सद्व्यंतराणां निलयेषु संस्थान् जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं अष्टप्रकारव्यंतरदेवानां गृहेषु जिनालयबिंबेभ्योऽर्घं ।

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्राविकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।
चंद्रार्कताराग्रहऋक्षज्योतिष्काणां यजे वै जिनबिंबवर्यान् ॥

ओंह्रीं पंचप्रकारज्योतिष्काणां देवानां गृहेषु जिनालयबिंबेभ्योऽर्घं ।

कल्पेषु कल्पातिगकेषु चैव देवालयस्थान् जिनदेवबिंबान् ।
सत्नीरगंधाक्षतमुख्यद्रव्यैर्यजे मनोवाक्तनुभिर्मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं कल्पकल्पातीतसुरविमानस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं ।

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान्नित्यं त्रिलोकींगतान् ।
वंदे भावनव्यंतरद्युतिवरस्वर्गामरावासगान् ॥

सद्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलै—
द्रव्यैर्नीरमुखैर्नमामि सततं दुष्कर्मणां शांतये ॥
ओं ह्रीं कृत्याकृत्रिमजिनालयस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घ्यं ।
वर्षेषु वर्षांतरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु,
यावंति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि बंदे जिनपुंगवानां ॥
अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां
वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानां ।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां
जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥
जम्बूधातकिपुष्करार्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये भवा-
श्चंद्राभोजशिखंडिकंठकनकप्रावृड्घनाभा जिनाः ।
सम्यग्ज्ञानचारित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मेंधना

भूतानागतवर्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥
श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जंबुवृक्षे
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचके कुंडले मानुषांके ।
इष्वाकारेंजनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके
ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥
द्वौ कुंदेंदुतुषारहारधवलौ द्वाविंद्रनीलप्रभौ
द्वौ बंधूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ ।
शेषाः षोडश जन्ममृत्युरहिताः संतप्तहेमप्रभा–
स्ते संज्ञानदिवाकरा सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छंतु नः ॥
नोकोडिसया पणवीसा तेपणलक्खाण सहससचाईसा ।
नौसेते पडियाला जिणपडिमाकिट्टिमा वंदे ॥
ओं ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अतीतचतुर्विंशातितीर्थंकरनामानि ।

निर्वाणसागराभिख्यो माधुर्यो विमलप्रभः ।
शुद्धवाक् श्रीधरो धीरो दत्तनाथोऽमलप्रभुः ॥ १ ॥
उद्धराह्वोऽग्निनाथश्च संयमः शिवनायकः ।
पुष्पांजलिर्जगत्पूज्यस्तथा शिवगणाधिपः ॥ २ ॥
उत्साहो ज्ञाननेता च महनीयो जिनोत्तमः ।
विमलेश्वरनामान्यो यथार्थश्च यशोधरः ॥ ३ ॥
कर्मसंज्ञोऽपरो ज्ञान-मतिः शुद्धमतिस्तथा ।
श्रीभद्रपदकांतश्चातीता एते जिनाधिपाः ॥ ४ ॥
नमस्कृतसुराधीशैर्महीपतिभिरार्चिताः ।
वंदिता धरणेंद्राद्यैः संतु नः सिद्धिहेतवे ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं अतीतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्योऽर्घं ।

वर्तमानचतुर्विंशतितीर्थंकरनामानि ।

ऋषभोऽजितनामा च संभवश्चाभिनंदनः ।
सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तमः ॥ १ ॥
चंद्राभः पुष्पदंतश्च शीतलो भगवान्मुनिः ।
श्रेयांसो वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः ॥ २ ॥
अनंतो धर्मनामा च शांतिकुंथो जिनोत्तमौ ।
अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥ ३ ॥
हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः ।
ध्वस्तोपसर्गदैत्यारिः पार्श्वो नागेंद्रपूजितः ॥ ४ ॥
कर्मांतकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसंभवः ।
एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥ ५ ॥
पूजिता भरताद्यैश्च भूपेंद्रैर्भूरिभूतिभिः ।

चतुर्विधस्य संघस्य शांतिं कुर्वंतु शाश्वतीं ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं वर्तमानचतुर्विंशतिजिनेभ्योऽर्घं ।

अनागततीर्थंकरनामानि ।

तीर्थकृच्च महापद्मः सूरदेवो जिनाधिपः ।
सुपार्श्वनामधेयोऽन्यो यथार्थश्च स्वयंप्रभुः ॥ १ ॥
सर्वात्मभूतइत्यन्यो देवदेवप्रभोदयः
उदयः प्रश्नकीर्तिश्च जयकीर्तिश्च सुव्रतः ॥ २ ॥
अरश्च पुण्यमूर्तिश्च निष्कषायो जिनेश्वरः ।
विमलो निर्मलाभिख्यश्चित्रगुप्तो वरः स्मृतः ॥ ३ ॥
समाधिगुप्तनामान्यौ स्वयंभूरनिवर्तकः ।
जयो विमलसंज्ञश्च दिव्यपाद इतीरितः ॥ ४ ॥
चरमोऽनंतवीर्योऽमी वीर्यधैर्यादिसद्गुणाः ।

चतुर्विंशतिसंख्याता भविष्यत्तीर्थकारिणः ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं अनागतचतुर्विंशतिजिनेभ्योऽर्घं ।

अथ जयमाला ।

कंपिल्लाणयरीमंडणस्स विमलस्स विमलणाणस्स ।
आरत्तिय वरसमये णच्चंति अमररमणीओ ॥

छंद ।

अमररमणीउ णच्चंति जिणमंदिरं । विविहवरतालतूरंहिं चंगमपुरं ॥
जडियबहुरयणचामीयरं पत्तयं, जोइयं सुंदरं जिणघआरत्तियं ॥२॥
रुणझणंकारणेवरघचलणुट्ठिया । मोतियादाम वच्छच्छले संठिया ॥
गीय गायंति णच्चंति जिणमंदिरं, जोइयं सुंद० ॥ ३ ॥
केशभारिकुसुमपयसरसढोलंतिया । वयण छणइंद समकंतवियसंतिया
कमलदलणयण जिणवयणपेखंतिया । जोइयं सुंद० ॥ ४ ॥

इंदधारिणिंदजक्खेंदवोहंतिया । मिलिव सुर असुर घणरासि खेलंतिया
के वि सियचमर जिणविंच ढोलंतिया । जोइयं सुंदरं० ॥ ७ ॥

गाथा— णंदीसुरम्मि दीवे वावण्णजिणालयेसु पडिमाणं ।
अट्ठाहियवरपव्वे इंदो आरत्तियं कुणई ॥

छंद ।

इंद आरत्तियं कुणइ जिणमंदिरं । रयणमणिकिरणकमलेहि वरसुंदरं ।
गीय गायंति णच्चंति वरणाडियं, तूर वज्जंति णाणाविहप्पाडियं ॥

गाथा—एक्केक्कम्मि य जिणहरे चउचउ सोलहवावीओ ।
जोयणलक्खपमाणं अट्ठमणंदीसुरे दीवे ॥ ८ ॥

अट्ठमं दीवणंदीसुरं भासुरं चैत्यचैत्यालये वंदि अमरासुरं ।
देवदेवीउ जह धम्मसंतोसिया, पंचमं गीय गायंति रसपोसिया ॥

गाथा—दिव्वेहिं खीरणीरेहिं गंधड्ढाइहिं कुसुममालाहिं ।

सव्वसुरलोयसहिया पुज्जा आरंभए इंदो ॥ १० ॥
इंद सोहम्मिसग्गावव्जोसयं, आयऊसज्जि ऐरावयं वरगयं ।
सव्वदव्वेहिं भव्वेहिं पूजाकरा, मिलिन पडिक्खया तस्स तिहु देसया ।
गाथा—कंसालतालतिवली, झल्लर भर भेरि वेणु विण्णाओ ।
वज्जंति भावसहिया भव्वेहिं णउज्जिया सव्वे ॥
छंद ।
सव्वदव्वेहिं भव्वेहिं करताडियं, सद्दए साझिगणझिगणिद्धाडयं
गिझिनिझं झिगिनिझं वज्जये झल्लरी, णच्चये इंदइंदायणी सुंदरी ।
णयणकज्जलसलायामयं दिण्णयं, हेमहीरालयं कुंडलं कंकणं ॥
झंझणं झंकरं तं पि ये णेवरं, जिणघआराच्चियं जोइयं सुंदरं ॥ १४ ॥
दिट्ठिणासग्गि अंगुलियदावंतिया,
खिणहिं खिण खिणहिं जिणबिंब जोहंतिया ॥

णारि णच्चंति गायंति कोइलसुरं, जिणघ आरत्तियं जोइयं सुंदरं ।
रुणुझुणंकारणे वरयकरकंकणं, णाह जंपंति जिणणाहवे बहुगुणं ॥
जुवइ णच्चंति सुमरंति ण उ णियघरं, जिणघआरत्तियं जोइयं सुंदरं॥
कंठकदलीह मणिहार झुल्लंतऊ, जिणइ थुइ थुई सो णाय संतुट्ठऊ ।
विविहकोऊहलं रयहि णारीणरं, जिणघआरत्तियं जोइयं सुंदरं ॥१७॥

घत्ता ।

आरत्तिय जोवइ कम्मइ धोवइ, सग्गापवग्ग हलहु लहइ ।
जं जं मण भावइ तं सुह पावइ, दीणु वि कासुण भासुणइ ॥
यावंति जिनचैत्यानि, विद्यंते भुवनत्रये ।
तावंति सततं भक्त्या, त्रिःपरीत्य नमाम्यहं ॥ अर्घं ।

इति नंदीश्वरपूजा समाप्ता ।

श्रीनंदीश्वरद्वीपकी (अष्टाह्निकाकी) पूजा भाषा ।

अडिल्ल ।

सरब परबमें बडो अठाईं परब है,
नंदीश्वर सुर जाहिं लेय वसु दरब है।
हमें सकति सो नाहिं इहां करि थापना,
पूजें जिनग्रह प्रतिमा है हित आपना ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् । ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

कंचनमणिमय भृंगार, तीरथनीरभरा,
तिहुं धार दयी, निरवार जामन मरन जरा ।

नंदीश्वरश्रीजिनधाम, बावन, पूज करों।

वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनंदभाव धरों ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो-जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ॥

भवतपहर शीतल वाच, सो चंदन नाहीं,

प्रभु यह गुन कीजे सांच, आयो तुम ठांहीं ॥ नंदी० २ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः संसारतापनाशनाय चंदनं ॥

उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे सोहैं,

सब जीते अक्षसमाज, तुम सम अरु को है ॥ नंदी० ३ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

तुम कामविनाशक देव, ध्याऊं फूलनसौं।

लहि शील लच्छमी एव, छूटूं सूलनसौं ॥ नंदी० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणा द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामी० ॥ ४ ॥

नेवज इन्द्रियबलकार, सो तुमने चूरा ।

चरु तुम ढिंग सोहै सार, अचरज है पूरा ॥ नंदी० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिण द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामि० ॥ ५ ॥

दीपककी ज्योति प्रकाश, तुम तनमाहिं लसै ।

टूटै करमनकी राशि, ज्ञानकणी दरसै ॥ नन्दी० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणा द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामि० ॥ ६ ॥

कृष्णागरुधूपसुवास, दशदिशिनारि बरै ।

अति हरषभाव परकाश, मानों नृत्य करै ॥ नंदी० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्योऽ-
ष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि० ॥ ७ ॥

बहुविधफल ले तिहुंकाल, आनंद राचत हैं।
तुम शिवफल देहु दयाल, तो हम जाचत हैं ॥
नंदीश्वरश्रीजिनधाम, बावन, पूज करों।
वसु दिन, प्रतिमा अभिराम, आनंदभाव धरों ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो
मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि० ॥ ८ ॥

यह अरघ कियो निज हेतु, तुमको अरपतु हों।
'द्यानत' कीनो शिवखेत,–भूमि समरपतु हों ॥ नंदी० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्योऽ-
नर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामि० ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा ।

कातिक फागुन साढके, अंत आठ दिनमाहिं ।
नंदीसुर सुर जात हैं, हम पूजें इह ठाहिं ॥ १ ॥

छंद ।

एकसौ तरेसठ कोडि जोजनमहा ।
लाख चौरासि एक एक दिशमें लहा ॥
अट्ठम द्वीप नंदीश्वरं भास्वरं ।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं ॥ २ ॥
चारदिशि चार अंजनागिरी राजहीं ।
सहस चौरासिया एकदिश छाजहीं ।
ढोलसम गोल ऊपर तलें सुंदरं । भौन० ॥ ३ ॥

एक इक चार दिशि चार शुभ बावरी ।
एक इक लाख जोजन अमल जलभरी ।
चहुंदिशा चार वन लाखजोजन वरं । भौन० ॥ ४ ॥
सोल वापीनमाधे सोल गिरि दधिमुखं ।
सहस दश महा जोजन लखत ही सुखं ।
बावरीकोंन दोमाहिं दो रतिकरं । भौन० ॥ ५ ॥
शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे ।
चार सोलै मिलैं सर्व बावन लहे ॥
एक इक सीसपर एक जिनमंदिरं । भौन० ॥ ६ ॥
बिंब अठ एकसौ रतनमइ सोह ही,
देवदेवी सरव नयनमन मोह ही ॥
पांचसै धनुष तन पद्मआसनपरं, भौन० ॥ ७ ॥

लाल नख मुख नथन स्याम अरु स्वेत हैं,
स्यामरंग भौंह सिरकेश छबि देत हैं ॥
वचन बोलत मनों हंसत कालुषहरं, भौन० ॥ ८ ॥
कोटि शशि भानदुति तेज छिप जात है,
महावैराग परिणाम ठहरात है ।
बथन नहिं कहैं लखि होत सम्यकधरं, भौन० ॥ ९ ॥

सोरठा ।

नंदीश्वर जिनधाम, प्रतिमामहिमा को कहै,
'द्यानत' लीनों नाम, यहै भगति सब सुख करै ॥ १० ॥ अर्घं ।

षोडशकारणपूजा संस्कृत ।

ऐंद्रं पदं प्राप्य परं प्रमोदं धन्यात्मतामात्मनि मन्यमानः ।
दृक्शुद्धिमुख्यानि जिनेंद्रलक्ष्म्या महाम्यहं षोडशकारणानि ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्रावतरत अवतरत संवौषट्, अत्र तिष्ठत, तिष्ठत ठः ठः, अत्र मम संनिहितानि भवत भवत वषट् ।

सुवर्णभृंगारविनिर्गताभिः पानीयधाराभिरिमाभिरुच्चैः ।
दृक्शुद्धिमुख्यानि जिनेंद्रलक्ष्म्या महाम्यहं षोडशकारणानि ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धिविनयसंपन्नता- शीलव्रतेष्वनतीचारा- भीक्ष्णज्ञानोपयोग-संवेग-शक्तितस्त्यागतपः-साधुसमाधि-वैयावृत्यकरणा-र्हद्भक्ति-आचार्यभक्ति- बहुश्रुतभक्ति-प्रवचनभक्ति-आवश्यकापरिहाणि-मार्गप्रभावना-प्रवचनवात्सल्येति तीर्थंकरत्वकारणेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीखंडपिंडोद्भवचंदनेन, कर्पूरपूरैः सुरभीकृतेन । दृक्० । चंदनं ।
स्थूलैरखंडैरमलैः सुगंधैः, शाल्यक्षतैः सर्वजगन्नमस्यैः । दृक्० । अक्षतं ।
गुंजद्द्विरेफैः शतपत्रजातीकेतकीचंपकमुख्यपुष्पैः । दृक्० पुष्पं ।
नवीनपक्वान्नविशेषसारैर्नानाप्रकारैश्चरुभिर्वरिष्ठैः । दृक्० । नैवेद्यं ।
तेजोमयोल्लासशिखैः प्रदीपैः दीपप्रभैर्ध्वस्ततमोवितानैः । दृक्० । दीपं ।

कर्पूरकृष्णागरुचूर्णरूपैर्धूपैर्हुताशाहुतदिव्यगंधैः। हक्० धूपं।
सन्नालिकेराक्रमुकाम्रबीजपूरादिभिः सारफलैः रसालैः। हक्० फलं।
पानीयचंदनरसाक्षतपुष्पभोज्यसद्दीपधूपफलकल्पितमर्घपात्रं।
आर्हंत्यहेत्वमलषोडशकारणानां पूजाविधौ विमलमंगलमातनोतु। अर्घं

अथ प्रत्येकार्घं।

यदा यदोपवासाः स्युराकर्ण्यंते तदा तदा।
मोक्षसौख्यस्य कर्तॄणि कारणान्यपि षोडश॥

(इति पठित्वा यंत्रोपरिपुष्पांजलिं क्षिपेत्–यंत्रके ऊपर पुष्प चढाने चाहिये)

असत्यसहिता हिंसा मिथ्यात्वं च न दृश्यते।
अष्टांगं यत्र संयुक्तं दर्शनं तद्विशुद्धये॥ १॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयेऽर्घं।

दर्शनज्ञानचारित्रतपसां यत्र गौरवं।

मनोवाक्कायसंशुद्धया साख्याता विनयस्थितिः ॥ २ ॥

ओं ह्रीं विनयसंपन्नतायै अर्घं ।

अनेकशीलसंपूर्णं व्रतपंचकसंयुतं ।
पंचविंशतिक्रिया यत्र तच्छीलव्रतमुच्यते ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं निरतिचारशीलव्रतायार्घं ।

काले पाठस्तवो ध्यानं शास्त्रे चिंता गुरौ नुतिः ।
यत्रोपदेशना लोके शास्त्रज्ञानोपयोगता ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं अभीक्ष्णज्ञानोपगायार्घं ।

पुत्रमित्रकलत्रेभ्यः संसारविषयार्थतः ।
विरक्तिर्जायते यत्र स संवेगो बुधैः स्मृतः ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं संवेगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जघन्यमध्यमोत्कृष्टपात्रेभ्यो दीयते भृशं ।

शक्त्या चतुर्विधं दानं साख्याता दानसंस्थितिः ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं शक्तितस्त्यागांगार्घं ।

तपो द्वादशभेदं हि क्रियते मोक्षलिप्सया ।

शक्तितो भक्तितो यत्र भवेत् सा तपसः स्थितिः ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं शक्तितस्तपसेऽर्घं ।

आर्या—मरणोपसर्गरोगादिष्टवियोगादनिष्टसंयोगात् ।

---

(१) चतुर्धा दानमाख्यातं योगिभिर्योगरंजकैः ।
स्वशक्त्या दीयते यत्र त्यागस्यैवं विधिर्मता ।
दानं पात्रे तपश्चित्ते चतुर्धा दशधापरं ।
स्वशक्त्या विद्यते यत्र स दानतपसोः स्थितिः ॥ ऐसा भी पाठ है।

(२) तपो द्वादशधा प्रोक्तं बाह्याभ्यंतरभेदतः ।
स्वशक्त्या क्रियते भव्यैः स्वर्गमोक्षाभिलाषिभिः । ऐसा भी पाठ है।

र्न भयं यत्र प्रविशति, साधुसमाधिः स विज्ञेयः ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं साधुसमाधयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अनुष्टुप्—कुष्ठोदरव्यथाशूलैर्वातपित्तशिरोर्तिभिः ।

काशस्वसज्वरारोगैः पीडिता ये मुनीश्वराः ॥

तेषां भैषज्यमाहारं शुश्रूषापथ्यमादरात् ।

यत्रैतानि प्रवर्तंते वैयावृत्यं तदुच्यते ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं वैयावृत्यकरणायार्घं ॥ ९ ॥

मनसा कर्मणा वाचा जिननामाक्षरद्वयं ।

सदैव स्मर्यते यत्र साऽर्हद्भक्तिः प्रकीर्तिता ॥ १० ॥

ओं ह्रीं अर्हद्भक्तयेऽर्घं० ॥ १० ॥

निर्ग्रंथमुक्तितो मुक्तिस्तस्य द्वारावलोकनं ।

तद्योज्यालाभतो वस्तुरसत्यागोपवासता ॥

तत्पादवंदनापूजा प्रणामो विनयो नातिः ।
एतानि यत्र जायंते गुरुभक्तिर्मता च सा ॥ ११ ॥
ओं ह्रीं आचार्यभक्तयेऽर्घं निर्वपामीति० ॥ ११ ॥

भवस्मृतिरनेकांतलोकालोकप्रकाशिका ।
प्रोक्ता यत्रार्हता वाणी वर्ण्यते सा बहुश्रुतिः ॥ १२ ॥
ओं ह्रीं बहुश्रुतभक्तयेऽर्घं ।

षद्द्रव्यपंचकायत्वं सप्त तत्त्वं नवार्थता ।
कर्मप्रकृतिविच्छेदो यत्र प्रोक्तः स आगमः ॥ १३ ॥
ओं ह्रीं प्रवचनभक्तयेऽर्घं ।

प्रतिक्रमस्तनूत्सर्गः समता वंदना स्तुतिः ।
स्वाध्यायः पठ्यते यत्र तदावश्यकमुच्यते ॥ १४ ॥
ओं ह्रीं आवश्यकापरिहाणयेऽर्घं ।

जिनस्नानं श्रुताख्यानं गीतवाद्यं च नर्तनं ।
यत्र प्रवर्तते पूजा सा सन्मार्गप्रभावना ॥ १५ ॥

ओं ह्रीं सन्मार्गप्रभावनायै अर्घं ।

चारित्रगुणयुक्तानां मुनीनां शीलधारिणां ।
गौरवं क्रियते यत्र तद्वात्सल्यं च कथ्यते ॥ १६ ॥

ओं ह्रीं प्रवचनवात्सलत्वायार्घं ।

अथ जयमाल ।

भवभवहि निवारण सोलहकारण पयडमि गुणगणसायरहं ।
पणविवि तित्थंकर असुहक्खयंकर केवलणाणदिवायरहं । १ ।

पद्धरी छंद ।

दिढ धरहु परम दंसण विसुद्धि, मणवयणकायविरइय तिसुद्धि ।
ना छंडहु विणऊ चउ पयार, जो मुत्तिवरांगण हियहि हार । २ ।

सं० अणुदिणु परिपालउ सीलभेउ, जो हुत्ति हरइ संसारहेउ।
४६ णाणोपजोग जो काल गमइ, तसु ताणिय किह्नि भुवणयरिहिं भमइ ॥
संवेउ चाउ जे अणुसंरति, वेएण भवण्णउ ते तरंति।
जे चउविह दाण सुपत्त देय, ते भोहभूमि सुह सत्थ लेय । ४ ।
जे तव तवंति बारहपयार, ते सग्गसुरिंदहविहवसार।
जो साहुसमाधि धरंति थक्कु, सो हवइ ण कालमुहंधुवक्कु । ५ ।
जो जाणइ वेयावच्चकरण, सो होइ सव्व दोसाण हरण।
जो चिंतइ मण अरिहंतदेव, तसु विसय अणंताक्खवण खेव । ६ ।
पव्वयणसरिस जे गुरु णमंति, चउगइसंसार ण ते भमंति।
बहु सुयह भत्ति जे णर करंति, अप्पउ रयणत्तय ते धरंति ॥ ७ ॥
जे छह आवासइ चित्तदेइ, सो सिद्धपंथसहरत्थ लेइ।
जे मग्गपहावण आइरंति, ते अहमिद्दंसण संभवंति ॥ ८ ॥



जे पवयणकज्जसमत्थ हंति, तहं कम्म जिणंदह क्खवण भंति।
जे वच्छलच्छ कारण वहंति, ते तित्थयरत्तउ पुह लहंति ॥ ९ ॥

घत्ता।

जे सोलह कारण कम्मवियारण जे धरंति वयसीलधरा।
ते दिवि अमरेसुर पहुमि णरेसुर सिद्धवरंगण हियहि हरा ॥१०॥ अर्घं।

एताः षोडश भावना यतिवराः कुर्वंति ये निर्मला—
स्ते वै तीर्थकरस्य नामपदवीमायुर्लभंते कुलं।
वित्तं कांचनपर्वतेषु विधिना स्नानार्चनं देवतां
राज्यं सौख्यमनेकधा वरतपो मोक्षं च सौख्यास्पदं।

इत्याशीर्वादः।

अथ सोलहकारणपूजा भाषा।

अडिल्ल।

सोलहकारण भाय तीर्थंकर जे भये,

हरषे इंद्र अपार मेरुपै ले गये ।

पूजा करि निज धन्य लख्यौ बहु चावसौं,

हम हू षोडशकारन भावैं भावसों ॥ १ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणानि ! अत्रावतरतावतरत । संवौषट् ।

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणानि ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत । ठः ठः ।

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणानि ! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट् ।

चौपई ।

कंचनझारी निरमल नीर, पूजौं जिनवर गुनगंभीर,

परमगुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ।

दरशविशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकरपददाय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनय जलं निर्वपामीति० ॥

चंदन घसौं कपूर मिलाय, पूजौं श्रीजिनवरके पाय ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ २ ॥
ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं० ॥
तंदुल धवल सुगंध अनूप । पूजौं जिनवर तिहुंजगभूप ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो । दरशविशुद्धि० ।
ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ॥
फूल सुगंध मधुपगुंजार । पूजौं जिनवर जगआधार ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥
सदनेवज बहुबिध पकवान । पूजों श्रीजिनवर गुणखान ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरशवि० ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ॥

दीपकजोति तिमिर छयकार। पूजूं श्रीजिन केवलधार।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥

दरशविशुद्धि भावना भाय। सोलह, तीर्थंकरपद दाय।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥

अगर कपूर गंध शुभ खेय। श्रीजिनवर आगें महकेय।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि० ॥ ७ ॥

श्रीफल आदि बहुत फलसार। पूजौं जिन वांछितदातार।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि० ॥ ८ ॥

जल फल आठों दरव चढाय। द्यानत वरत करों मनलाय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामि० ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा ।

षोडशकारण गुण करै, हरै चतुरगतिवास ।
पाप पुण्य सब नाशकै, ज्ञानभान परकास ॥ १ ॥

चौपई १६ मात्रा ।

दरशविशुद्धि धरै जो कोई । ताको आवागमन न होई ॥
विनय महा धारै जो प्रानी । शिववनिताकी सखी बखानी ॥ २ ॥
शील सदा दिढ जो नर पालै । सो औरनकी आपद टालै ॥
ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं । ताकै मोहमहातम नाहीं ॥ ३ ॥
जो संवेगभाव विसतारै । सुरगमुकतिपद आप निहारै ॥

दान देय मन हरष विशेखै । इह भव जस परभव सुख देखै ॥ ४ ॥
जो तप तपै खपै अभिलाषा । चूरै करमशिखर गुरु भाषा ॥
साधुसमाधि सदा मन लावै । तिहुंजगभोग भोगि शिव जावै ॥ ५ ॥
निशदिन वैयावृत्य करैया । सो निहचै भवनीर तिरैया ॥
जो अरहंतभगति मन आनै । सो जन विषय कषाय न जानै ॥ ६ ॥
जो आचारजभगति करै है । सो निर्मल आचार धरै है ॥
बहुश्रुतवंतभगति जो करई । सो नर संपूरन श्रुत धरई ॥ ७ ॥
प्रवचनभगति करै जो ज्ञाता । लहै ज्ञान परमानंददाता ॥
षट्आवश्य काल जो साधै । सो ही रतनत्रय आराधै ॥ ८ ॥
धरमप्रभाव करैं जे ज्ञानी । तिन शिवमारग रीति पिछानी ॥
वत्सल अंग सदा जो ध्यावै, सो तीर्थंकर पदवी पावै ॥ ९ ॥

दोहा ।

एही सोलह भावना, सहित धरै व्रत जोय ।
देव इंद्र नरबंद्यपद, 'द्यानत' शिवपद होय ॥ १० ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ दशलक्षणपूजा संस्कृत ।

उत्तमादिक्षमाद्यंतब्रह्मचर्यसुलक्षणं ।
स्थापयेद्दशधा धर्ममुत्तमं जिनभाषितं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलाक्षणिकधर्म ! अत्रावतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम संन्निहितो भव भव वषट् (यंत्रकी स्थापना करनी चाहिये)

प्रालेयशैलशुचिनिर्गतचारुतोयैः, शीतैः सुगंधिसहितैर्मुनिचित्ततुल्यैः
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमा-मार्दवा-र्जव-सत्य-शौच-संयम-तपस्त्यागा-किंचन्य-ब्रह्मचर्यधर्मेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीचंदनैर्बहलकुंकुमचंद्रमिश्रैः संवासवासितदिशामुखदिव्यसंस्थैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं । चंदनं ।
शालीयशुद्धसरलामलपुण्यपुंजै रम्यैरखंडशशिलक्षणरूपतुल्यैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं । अक्षतं ।
मंदारकुंदवकुलोत्पलपारिजातैः, पुष्पैः सुगंधसुरभीकृतमूर्धलोकैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं ॥ पुष्पं ।
अत्युत्तमैः रसरसादिकसद्यजातैर्नैवेद्यकैश्च परितोषितभव्यलोकैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं । नैवेद्यं ।
दीपैर्विनाशिततमोत्कररुद्धताशैः, कर्पूरवर्तिज्वलितोज्ज्वलभाजनस्थैः
संपूजयामि दक्षलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं ॥ दीपं ।
कृष्णागरुप्रभृतिसर्वसुगंधद्रव्यैर्धूपैस्तिरोहितदिशामुखदिव्यधूमैः ।
संपूजयामि दशलक्षणधर्ममेकं संसारतापहननाय क्षमादियुक्तं ॥ धूपं ।

पूगीलवंगकदलीफलनालिकेरैर्हृद्घ्राणनेत्रसुखदैः शिवदानदक्षैः। सं०फलं
पानीयस्वच्छहरिचंदनपुष्पसारैः शालीयतंदुलनिवेद्यसुचंद्रदीपैः ।
धूपैः फलावलिविनिर्मितपुष्पगंधैः, पुष्पांजलिभिरपि धर्ममहं समर्चे। अर्घं

अंगपूजा ।

येनकेनापि दुष्टेन पीडितेनापि कुत्रचित् ।
क्षमा त्याज्या न भव्येन स्वर्गमोक्षाभिलाषिणा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं परमब्रह्मणे उत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तमखममद्दउ अज्जउ सच्चउ पुण सउच्च संजम सुतऊ।
चाउवि आकिंचणु भवभयवंचणु बंभचेरु धम्मजु अखऊ ॥१॥
उत्तमखम तिल्लोयहसारी, उत्तमखम जम्मोदहितारी ।
उत्तमखम रयणत्तयधारी, उत्तमखम दुग्गइदुहहारी ॥ २ ॥
उत्तमखम गुणगणसहयारी, उत्तमखम मुणिविंदपयारी ।

उत्तमखम बुहयणं चिंतामणि, उत्तमखम संपज्जइ थिरमणि ॥ ३ ॥
उत्तमखम महणिज्ज सयलजणु, उत्तम खम मिच्छत्त विहंडणु।
जह असमत्थह दोसु खमिज्जइ, जहिं असमत्थह ण वि रूसिज्जइ ॥
जहिं आकोसणवयण सहज्जइ, जहिं परदोस ण जण भासिज्जइ।
जह चेयणगुण चित्त धरिज्जइ, तहिं उत्तम खम जिणे कहिज्जइ ॥ ५ ॥

घत्ता।

इय उत्तमखमजूया सुरखगणूया केवलणाण लहइ वि थिरू।
हुय सिद्धणिरंजण भवदुहभंजणु अगणियरिसि पुंगमजि चिरू ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगायार्घं।

मृदुत्वं सर्वभूतेषु कार्यं जीवेन सर्वदा।
काठिन्यं त्यज्यते नित्यं धर्मबुद्धिं विजानता ॥ २ ॥

ओं ह्रीं परमब्रह्मणो उत्तममार्दवधर्मांगाय जलाद्यर्घं।

मद्दव भवमद्दणु माणणिकंदणु दयधम्म जु मूल हु विमलु।
सव्वह हिययारउ गुणगणसारउ तिसु उच्चऊ संजम मयलु ॥१॥

मद्दउ माणकसाय विहंडणु, मद्दउ पंचेंदियमण दंडणु।
मद्दउ धम्मइ करुणावल्ली, पसरइ चित्तमहीरुहवल्ली ॥ २ ॥

मद्दउ जिणवर भत्तिपयासइ, मद्दउ कुमइपसरु णिण्णासइ।
मद्दवेण वहुविणय पवट्टइ, मद्दवेण जणवइरी हट्टइ ॥ ३ ॥

मद्दवेण परिणामविसुद्धी, मद्दवेण विहु लोयह सिद्धी।
मद्दवेण दोविह तव सोहइ, मद्दवेण तिजो णर मोहइ ॥ ४ ॥

मद्दउ जिणसासण जाणिज्जइ, अप्पापर सरूव भासिज्जइ।
मद्दउ दोस असेस णिवारउ, मद्दउ जणणसमुद्दह तारउ ॥५॥

---

१ 'हवउ' ऐसा भी पाठ है।

घत्ता ।

सम्मद्दंसण अंगु मद्दउपरिणाम जु मुणहु ।
इय परियाण विचित्त, मद्दउ धम्म अमल थुणहु ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

आर्यत्वं क्रियते सम्यक् दुष्टबुद्धिश्च त्यज्यते ।
पापचिंता न कर्त्तव्या श्रावकैर्धर्मचिंतकैः ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं परमब्रह्मणे आर्जवधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

धम्मह वरलक्खणु अज्जउ थिरमणु दुरियविहंडणु सुहजणणु ।
तं इत्थु जि किज्जइ तं पालिज्जइ, तं णि सुणिज्जइ खयजणणु ॥ १ ॥
जारिसु णिजयचित्त चिंतिज्जइ, तारिसु अण्णहु पुण भासिज्जइ ।
किज्जइ पुण तारिसु सुहसंचणु, तं अज्जवगुण मुणहु अवंचणु ॥ २ ॥
मायासल्ल मणहु णीसारहु, अज्जउ धम्म पवित्त वियारहु ।

वउ तउ मायावियउ णिरत्थउ, अज्जउ सिवपुर पंथ सउत्थउ ॥ ३ ॥
जत्थ कुटिलपरिणाम चइज्जइ, तहिं अज्जउ धम्मजु संपज्जइ ।
दंसणणाणसरूव अखंडो, परम अतींदिय सुक्खकरंडो ॥ ४ ॥
अप्पे अप्पउ भवहृतरंडो, एरिसु चेयणभावपयंडो ।
सो पुण अज्जउ धम्मे लब्भइ, अज्जवेण वेरियमण खुब्भइ ॥ ५ ॥

घत्ता ।

अज्जउ परमप्पउ गयसंकप्पउ चिम्मितु सासय अभयपऊ ।
तं णिरुजाइज्जइ संसउ हिज्जइ, पाविज्जइ जिहि अचलपऊ ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

असत्यं सर्वथा त्याज्यं दुष्टवाक्यं च सर्वदा ।
परनिंदा न कर्तव्या भव्येनापि च सर्वदा ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं परमब्रह्मणे उत्तमसत्यधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दयधम्महु कारण दोसणिवारण, इहभवपरभव सुक्खयरू ।
सच्चुजि वयणुल्लउ भुवणिअतुल्लउ बोलिज्जइ वीसासयरू ॥ १ ॥
सच्चु जि सव्वह धम्मपहाणु, सच्चु जि महियलगरुवविहाण ।
सच्चु जि संसारसमुद्दसेउ, सच्चु जि भव्वह मण सुक्खहेउ ॥ २ ॥
सच्चेण जि सोहइ मणुवजम्मु, सच्चेण पवित्तउ पुण्णकम्म ।
सच्चेण सयल गुणगण सहंति, सच्चेण तियस सेवा वहंति ॥ ३ ॥
सच्चेण अणुव्वमहव्वयाइ, सच्चेण विणासिय आवयाइ ।
हियमिय भासिज्जइ णिच्चभास, ण वि भासिज्जइ परदुहपयास ॥ ४ ॥
परबाह्यायर भासहु ण भव्व, सच्चु णि छंडउ विगयगव्व ।
सच्चु जि परमप्पा अत्थि एक्कु, सो भावहु भवतमदलण अक्कु ॥५॥
रुंधिज्जइ मुणिणा वयणगुत्ति, जंखण किट्टइ संसार अत्ति ।

सच्चु जि धम्मफलेण केवलणाण वहेइ थणु ।
तं पालहु भो भव्वँ ! भणहु ण आलियउ इह वयणु ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं सत्यधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

बाह्याभ्यंतरैश्चापि मनोवाक्कायशुद्धिभिः ।
शुचित्वेन सदा भाव्यं पापभीतैः सुश्रावकैः ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं परमब्रह्मणो उत्तमशौचधर्मांगाय जलाद्यर्घं नि० ।

सच्चु जि धम्मंगो तं जि अभंगो भिण्णंगो उवओगगमई ।
जरमरणविणासणु तिजयपयासणु काइज्जइ अहिणिसु जि थुऊ ॥
धम्म सउच्च होइ मणसुद्धिय, धम्म सउच्च वयणधण गिद्धिय ।
धम्म सउच्च लोह वज्जंतउ, धम्म सउच्च सुतव पहिजंतउ ॥
धम्म सउच्च बंभवयधारणु, धम्म सउच्च मयट्ठणिवारणु ।

धम्म सउच्च जिणायमभणणे, धम्म सउच्च सुगुण अणुमणणे ॥
धम्म सउच्च सल्लकयचाए, धम्म सउच्चु जि णिम्मलभाए ।
धम्म सउच्च कसाय अहावे, धम्म सउच्च ण लिप्पइ पावे ॥
अहवा जिणवर पूज विहाणे, णिम्मल फासुयजलकयण्हाणे ।
तं पि सउच्च गिहत्थउ भासइ, णावि मुणिवरह कहिउलोयासिउ ॥

घत्ता ।

भव मुणि वि अणिच्चो धम्म सउच्चउ पालिज्जइ एयग्गमणि ।
सिवमग्ग सहाओ सिवपयदाओ अणुमचिंतहिंकिंणिखणि ॥

ओं ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

संयमं द्विविधं लोके कथितं मुनिपुंगवैः ।
पालनीयं पुनश्चित्ते भव्यजीवेन सर्वदा ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं परमब्रह्मणे उत्तमसंयमधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

संजम जाणि दुल्लहु, तं पाविल्लहु, जो छंडइ पुणे मूढमई ।
सो भमै भवावलि जरमरणावलि, किम पावइ सुइ पुण सुगई ॥
संजम पंचेंदिय दंडणेण, संजम जि कसाय विहंडणेण ।
संजम दुद्धर तव धारणेण, संजमरस चाय वियारणेण ॥
संजम उववास वियंभणेण, संजम मणुपसरहु थंभणेण ।
संजम गुरुकायकलेसणेण, संजम परिगहगिहचायणेण ॥
संजम तसथावररक्खणेण, संजम तिणिजोयणियत्तणेण ।
संजमसुतत्थपारिरक्खणेण, संजम बहुगमण चयंतणेण ॥
संजम अणुकंपकुणंतणेण, संजम परमत्थवियारणेण ।
संजम पोसइ दंसण हु अत्थु, संजम तिसहूणि रुमोक्खपंथ ॥
संजम विणु णरभव सयल सुण्णु, संजम विणु दुग्गइ जि उपवण्णु ।
संजम विण घडि य म इत्थ जाउ, संजम विण विहली अत्थि आउ ॥

घत्ता।

इहभवपरभवसंजमसरणो, होज्जउ जिणणाहे भणिओ।
दुग्गइ सरसोसण खरकिरणोवम जेण भवारि विसम हणिओ॥

ओं ह्रीं संयमधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादशं द्विविधं लोके बाह्याभ्यंतरभेदतः।
स्वयं शक्तिप्रमाणेन क्रियते धर्मवादिभिः॥ ७॥

ओं ह्रीं परमब्रह्मणे उत्तमतपोधर्मांगायार्घं।

णरभवपावेप्पिणु तच्च मुणेप्पिणु खंड वि पंचेंदियसमणु।
णिव्वेउवि मंडिवि संगइ छंडिवि तव किज्जइ जाये विवणु॥ १॥
तं तउ जइ परिगह छंडिज्जइ, तं तउ जहि मयणु जि खंडिज्जइ।
तं तउ जहि णग्गत्तणु दीसइ, तं तउ जहि गिरिकंदर णिवसइ॥ २॥
तं तउ जहि उवसग्ग सहिज्जइ, तं तउ जहि रायाइ जिणिज्जइ।

तं तउ जहि भिक्खइ भुंजिज्जइ, सावहगेह कालणिविसज्जइ ॥ ३ ॥
तं तउ जत्थ समिदिपरिपालणु, तं तउ गुत्तित्तयहणिहालणु ।
तं तउ जहि अप्पापर बुज्झिउ, तं तउ जहि भव माणु जि उज्झिउ ॥
तं तउ जहिं ससरूव मुणिज्जइ, तं तउ जहि कम्महगण खिज्जइ ।
तं तउ जहिं सुरभत्तिपयासहिं, पवयणत्थ भवियणह पभासहिं ॥ ५ ॥
जेण तवे केवल उपवज्जइ, सासय सुक्ख णिच्च संपज्जइ ॥

घत्ता ।

बारहविहु तउवरु दुग्गइपरिहरु, तं पूजिज्जइ थिरमणिणा ।
मच्छरमयछंडिवि करणइ दंडिवि तं पि धरिज्जइ गौरविणा ।

ओं ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चतुर्विधाय संघाय दानं चैव चतुर्विधं ।
दातव्यं सर्वथा सद्भिश्रितकैः पारलौकिकैः ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं परमब्रह्मणो उत्तमत्यागधर्मांगायार्घं ॥

चाउ वि धम्मंगो करहु अभंगो णियसत्तिइ भत्तिय जणहु ।
पत्तह सुपवित्तह तवगुणजुत्तह परगइसंवलु तं मुणहु ॥ १ ॥
चाए आवागवणउ हट्टइ, चाए णिम्मल कित्ति पवित्तइ ।
चाए वयरिय पणमिइ पाये, चाए भोगभूमि सुह जाए ॥ २ ॥
चाउ विहिज्जइ णिच्च जि विणए, सुयवयणे भासेप्पिणु पणए ।
अभयदाण दिज्जइ पहिलारउ, जिमि णासइ परभवदुहयारउ ॥
सत्थदाण वीजो पुण किज्जइ, णिम्मलणाण जेण पाविज्जइ ।
ओसह दिज्जइ रोयविणासणु, कह वि ण पित्थइ वाहिपयासणु ॥
आहारे धणरिद्धि पवित्तइ, चउविह चाउ जि एहु पवित्तइ ।
अहवा दुट्ठवियप्पह चाए, चाउ जि एहु मुणहु समवाए ॥ ५ ॥
घत्ता ।
दुहियहिं दिज्जइ दाण, किज्जइ माणु जि गुणियणाहिं ।

दयभावीय अभंग, दंसण चिंतिज्जइ मणहं ॥

ओं ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चतुर्विंशातिसंख्यातो यो परिग्रह ईरितः ।
तस्य संख्या प्रकर्तव्या तृष्णारहितचेतसा ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं परमब्रह्मणे उत्तमाकिंचन्यधर्मांगायार्घं निर्वपा० ।

आकिंचणु भावहु अप्पा ज्झावहु देहभिण्णउज्झाणमऊ ।
निरुवम गयवण्णउ सुहसंपण्णउ, परमअतींदिय विगयभउ ॥ १ ॥
आकिंचणु चउसंगहणिवित्ति, आकिंचणु चउसुज्झाणसत्ति ।
आकिंचणु वउवियलियममत्ति, आकिंचणु रयणत्तयपवित्त ।
आकिंचणु आउ चिणहिचित्त, पसरंतउ इंदियवणिविचित्त ।
आकिंचणु देहहणेहचित्त, आकिंचणु जं भवसुह विरत्त ।
तिणमत्त परिग्गह जत्थ णत्थि, मणिराउ विहिज्जइ तव अवत्थि ।

अप्पापर जत्थ वियारसत्ति, पयाडिज्जइ जहि परमेट्ठिभत्ति ॥
जह छंडिज्जइ संकप्पदुट्ठ, भोयण वंछिज्जइ जह अणिट्ठ ।
आकिंचण धम्म जि एम होइ, तं ज्झाइज्जइ णरुइत्थलोइ ॥

घत्ता ।

एं हुज्जि पहावे, लद्धसहावे तित्थेसर सिवनयारिगया ।
ते पुण रिसिसारा मयणवियारा बंदाणिज्ज एतेण सया ॥

ओं ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

नवधा सर्वदा पाल्यं शीलं संतोषधारिभिः ।
भेदाभेदेन संयुक्तं सद्गुरूणां प्रसादतः ॥ १० ॥

ओं ह्रीं परमब्रह्मणे उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगायार्घं निर्व० ॥

बंभव्वउ दुद्धरु धारिज्जइवरु केडिज्जइ विसयासणिरु ।
तियसुक्खयरत्तो मणकरिमत्तो तं जि भव्व रक्खेहु थिरु ॥

चित्तभूमि मयणु जि उपवज्जइ, तेण जु पीडउ करइ अकज्जइ ।
तियहु सरीरइ णिंदइ सेवइ, णिय परणारि ण मूढउ वेवइ ।
णिवडइ णिरय महादुह भुंजइ, जो हीणु जि बंभव्वउ भंजइ ॥
इय जाणेविणु मणवयकाए, बंभचेरु पालहु अणुराए ।
णवपयार सत्थिय सुहयारउ, बंभव्वे विणु वउतउ जि असारउ ।
बंभव्वे विणु काय किलेसइ, विहल सयल भासीय जिणेसइं ।
बाहिर फरसेंदियसुहरक्खउ, परमबंभ आभिंतर पिक्खउ ॥
एण उवाए लब्भइ सिवहरु, इम रइधू बहु भणइ विणययरु ॥

घत्ता ।

जिणणाह महिज्जइ, मुणि पणविज्जइ, दहलक्खण पालिइ णिरु ।
भो खेमसियासुय भव्व विणयजुय होलिवम्मयहु करहु थिरु ॥

ओं ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

समुच्चय आरती ।

इय काऊण णिज्जरं जे हणंति भवपिंजरं ।
नीरोयं अजरामरं ते लहंति सुक्खं परं ॥ १ ॥

जेण मोक्खफल तं पाविज्जइ, सो धम्मंगो एहहु गिज्जइ ।
खमखमायलु तुंगय देहउ, मद्दउ पल्लउ अज्जउ सेहउ ॥
सच्च सउच्च मूल संजमदलु, दुविह महातव णवकुसुमाउलु ।
चउविह चाउय साहियपरमलु, पीणिय भव्वलोय छप्पइयलु ॥
दियसंदोह सद्द कलकलयलु, सुरणरवरखेयर सुहसयफलु ।
दीणाणाह दीह सम णिग्गहु, सुद्ध सोमतणुमित्तपरिग्गहु ॥
बंभचेरु छाएइ सुहासिउ, रायहंम नियगेहि समासिउ ।
एहउ धम्म रुक्ख लाखिज्जइ, जीवदया वयणहि राखिज्जइ ॥
झाणट्ठाण भल्लारउ किज्जइ, मिच्छामई पवेस ण दिज्जइ ।

सीलसलिलधारहि सिंचिज्जइ, एम पयच्चणवड्ढारिज्जइ ॥

घत्ता ।

कोहानल चुक्कउ, होउ गुरुकउ, जाइ रिसिंदिय सिद्धगई ।
जगताइ सुहंकरु धम्ममहातरु देइ फलाइ सुमिट्ठमई ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिलक्षणधर्मेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ दशलक्षणधर्मपूजा भाषा ।

अडिल्ल ।

उत्तम छिमा मारदव आरजवभाव हैं ।
सत्य सौच संजम तप त्याग उपाव हैं ॥
आकिंचन ब्रह्मचरज धरम दश सार हैं ।
चहुंगतिदुखतैं काढि मुकतिकरतार हैं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्रावतर अवतर ! संवौषट् ।

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सोरठा ।

हेमाचलकी धार, मुनिचित सम शीतल सुरभि ।

भवआताप निवार, दसलच्छन पूजौं सदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय जलं निर्वपामि ॥ १ ॥

चंदन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा । भवआ० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय चंदनं निर्वपामि ॥ २ ॥

अमल अखंडित सार, तंदुल चंद्रसमान शुभ ॥ भवआ० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षतान् निर्वपामि ॥ ३ ॥

फूल अनेकप्रकार, महकैं ऊरधलोक लों । भवआ० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय पुष्पं निर्वपामि ॥ ४ ॥

नेवज विविध निहार, उत्तम षटरससंजुगत ॥ भवआ० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय नैवेद्यं निर्वपामि ॥ ५ ॥

बाति कपूर सुधार, दीपकजोति सुहावना ॥ भवआ० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय दीपं निर्वपामि ॥ ६ ॥

अगर धूप विस्तार, फैलै सर्व सुगंधता ॥ भवआ० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय धूपं निर्वपामि ॥ ७ ॥

फलकी जाति अपार, घ्रान नयन मनमोहने ॥ भवआ० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय फलं निर्वपामि ॥ ८ ॥

आठों दरव संवार, द्यानत अधिक उछाहसों ॥ भवआ० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मायार्घ्यं निर्वपामि० ॥ ९ ॥

अंगपूजा।

सोरठा।

पीडैं दुष्ट अनेक, बांध मार बहुविधि करैं।
धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजे पीतमा ॥ १ ॥

चौपई मिश्रित गीताछंद ।

उत्तमछिमा गहो रे भाई । इहभव जस परभव सुखदाई ॥
गाली सुनि मन खेद न आनो । गुनको औगुन कहै अयानो ॥
कहि है अयानो वस्तु छीनै, बांध मार बहुविधि करै
घरतैं निकारै तन विदारै, वैर जो न तहां धरै ॥
तैं करम पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा ।
अतिक्रोधअगनि बुझाय प्रानी, साम्य जल ले सीयरा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मान महाविषरूप, करहि नीचगति जगतमें ।
कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्रानी सदा ॥ २ ॥

१ कहीं २ सोरठा कहकर प्रत्येक धर्मकी स्थापना करते हैं और फिर आगेकी चौपाई तथा गीता कहकर अर्घ च
अर्घ चढाते है और कहीं २ सोरठाके अन्तमें भी अर्घ चढाते हैं और चौपाई गीताके अंतमें भी अर्घ चढाना चाहिये ।
ढाते हैं। यथार्थमें सोरठा और चौपाई गीताके अंतमें एक एक धर्मका अलग २ एक २ अर्घ

उत्तम मार्दवगुन मन माना । मान करनकौ कौन ठिकाना ।
वस्यो निगोदमाहितैं आया । दमरी रूंकन भाग विकाया ॥
रूंकन विकाया भागवशतैं, देव इकइंद्री भया ।
उत्तम मुआ चंडाल हूवा, भूप कीडोंमें गया ॥
जीतब्य-जोवन-धनगुमान, कहा करै जलबुदबुदा ।
करि विनय बहुगुन बडे जनकी, ज्ञानका पावै उदा ॥ २ ॥
ओं ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥
कपट न कीजै कोय, चोरनके पुर ना वसै ।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु संपदा ॥ ३ ॥
उत्तमआर्जवरीति बखानी । रंचक दगा बहुत दुखदानी ।
मनमें हो सो वचन उचारिये । वचन होय सो तनसौं करिये ॥
करिये सरल तिहुंजोग अपने, देख निरमल आरसी ।

मुख करै जैसा लखै तैसा, कपटप्रीति अंगारसी ॥
नहिं लहै लछमी अधिक छलकारि, करमबंधविशेषता ।
भय त्यागि दूध बिलाव पीवै, आपदा नहिं देखता ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥
धरि हिरदै संतोष, करहु तपस्या देहसौं ।
शौच सदा निरदोष, धरम बडो संसारमें ॥ ४ ॥
उतम शौच सर्व जग जाना । लोभ पापको बाप बखाना ॥
आसापास महा दुखदानी । सुख पावै संतोषी प्रानी ॥
प्रानी सदा शुचि शीलजपतप, ज्ञानध्यानप्रभावतैं ।
नित गंगजमुन समुद्र न्हाये, अशुचिदोष सुभावतैं ॥

१ तत्त्वार्थसूत्रमें सत्यसे पहिले शौचधर्मको कहा है, इसकारण इस पूजामें भी हमने तत्त्वार्थसूत्रके पाठानुसार शौचधर्मको पहले कर दिया है ।

ऊपर अमल, मल भर्यो भीतर, कौन विध घट शुचि कहै ॥
बहु देह मैली सुगुनथैली, शौचगुन साधू लहै ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

कठिन वचन मति बोल, परनिंदा अरु झूठ तज ।
सांच जवाहर खोल, सतवादी जगमें सुखी ॥ ५ ॥
उत्तम सत्यवरत पालीजै, परविश्वासघात नहिं कीजै ॥
सांचे झूठे मानुष देखो, आपनपूत स्वपास न पेखो ॥
पेखो तिहायत पुरुष सांचेको, दरब सब दीजिये ।
मुनिराज श्रावककी प्रतिष्ठा, सांचगुण लख लीजिये ॥
ऊंचे सिंहासन बैठि वसुनृप, धरमका भूपति भया ।
वच झूठसेती नरक पहुंचा, सुरगमें नारद गया ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

काय छहों प्रतिपाल, पंचेंद्री मन वश करो,

संजमरतन संभाल, विषयचोर बहु फिरत हैं ॥ ६ ॥
उत्तम संजम गहु मन मेरे, भवभवके भाजैं अघ तेरे ॥
सुरग नरकपशुगतिमें नाहीं, आलसहरन करन सुख ठाहीं ॥
ठाहीं पृथी जल आग मारुत, रूख त्रस करुना धरो ।
सपरसन रसना घ्रान नैना, कान मन सब वश करो ॥
जिस विना नहिं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जगकीचमें ।
इक घरी मत विसरो करो नित, आव जममुख वीचमें ॥
ओं ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

तप चाहैं सुरराय, करमसिखरको वज्र है ।
द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करै निज सकति सम ॥ ७ ॥
उत्तम तप सबमाहिं बखाना । करमशैलको वज्र समाना ॥
बस्यो अनादिनिगोदमंझारा । भूविकलत्रय पशुतन धारा ॥

धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आव निरोगता।
श्रीजैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषयपयोगता॥
अति महादुरलभ त्याग विषय, कषाय जो तप आदरै।
नरभवअनूपमकनकघरपर, मणिमयी कलसा धरै॥ ७॥

ओं ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ ७॥

दान चारपरकार, चारसंघको दीजिये।
धन विजुली उनहार, नरभवलाहो लीजिए॥ ८॥

उत्तमत्याग कह्यो जगसारा। औषध शास्त्र अभय आहारा॥
निहचै रागद्वेष निरवारै। ज्ञाता दोनों दान संभारै॥

दोनों संभारै कूपजलसम, दरब घरमें परिनया।
निजहाथ दीजे साथ लीजे, खाय खोया बह गया॥
धनि साध शास्त्र अभयदिवैया, त्याग राग विरोधकों॥

विन दान श्रावक साध दोनौं, लहैं नाहीं बोधकौं ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं उत्तमत्यागधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

परिग्रह चौविस भेद, त्याग करैं मुनिराजजी ।
तिसनाभाव उछेद, घटती जान घटाइए ॥ ९ ॥
उत्तम आकिंचन गुण जानौ । परिग्रहचिंता दुख ही मानौ ॥
फांस तनकसी तनमें सालै , चाह लंगोटीकी दुख भालै ।
भालै न समता सुख कभी नर, विना मुनिमुद्रा धरैं ।
धनि नगनपर तन-नगन ठाडे, सुर असुर पायनि परैं ॥
घरमांहि तिसना जो घटावै, रुचि नहीं संसारसौं,
बहुधन बुरा हू भला कहिए, लीन पर उपगारसौं ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

शीलबाड नौ राख, ब्रह्मभाव अंतर लखो ।

करि दोनों अभिलाख, करहु सफल नरभव सदा ॥ १० ॥

उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौ । माता बहिन सुता पहिचानौ ॥
सहैं बानवरषा बहु सूरे । टिकैं न नैन बान लखि कूरे ॥
कूरे तियाके अशुचितनमें, कामरोगी रति करै ।
बहु मृतक सडहिं मसानमाहीं, काक ज्यों चोंचैं भरै ।
संसारमें विषबेल नारी, तजि गये जोगीश्वरा ।
'द्यानत' धरमदशपैडि चढिकैं, शिवमहलमें पग धरा ॥ १० ॥

ओं ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १० ॥

अथ समुच्चय जयमाला ।

दोहा ।

दशलच्छन बंदौं सदा, मनबांछित फलदाय ।
कहों आरती भारती, हमपर होहु सहाय ॥ १ ॥

वेसरी छंद ।

उत्तमछिमा जहां मन होई । अंतरबाहिर शत्रु न कोई ॥
उत्तममार्दव विनय प्रकासै, नानाभेद ज्ञान सब भासै ॥ २ ॥
उत्तमआर्जव कपट मिटावै, दुरगति त्यागि सुगति उपजावै ।
उत्तमशौच लोभपरिहारी, संतोषी गुणरतनभंडारी ॥ ३ ॥
उत्तमसत्यवचन मुख बोलै, सो प्रानी संसार न डोलै ।
उत्तमसंयम पालै ज्ञाता, नरभव सफल करै ले साता ॥ ४ ॥
उत्तमतप निरवांछित पालै, सो नर करमशत्रुको टालै ।
उत्तमत्याग करै जो कोई, भोगिभूमि-सुर-शिवसुख होई ॥५॥
उत्तमआकिंचनवृत धारै, परमसमाधिदशा विसतारै ।
उत्तमब्रह्मचर्य मन लावै, नरसुरसहित मुकतिफल पावै ॥ ६

दोहा ।

करै करमकी निरजरा, भवपींजरा विनाशि ।

अजर अमरपदकों लहै, 'द्यानत' सुखकी राशि ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागाकिञ्चन्यब्रह्मचर्यदशलक्षणधर्माय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

(अर्घ्यके बाद विसर्जन करना)

दशलक्षणधर्मकी पूजा भाषा (दूसरी)

केवल अष्टक । चाल सोहरकी ।

दसलक्षण दसधर्म जपो मनभाव जपो मनभावहु रे ।
ललना नाचिराचि गुनगाय सुभक्ति बढावो सो भक्ति बढावहु रे । टेक.
गंगाजल सम नीर सो उज्वल ल्यावो सो उज्वल ल्यावहु रे ।
ललना जन्म जरा निरदोसको नास करावो सो नास करावहु रे । जलं ।
मलयागिरिकपूर सो घसिकर लावो सो घसिकर ल्यावहु रे ।

ललना स्वर्नभृंगार भराय सो जिनको चढावो सो जिनको चढावहु रे,

दसलक्षण० । ललना नाचि राचि० ॥ चन्दनं ॥ २ ॥

मुक्ताफल सम उज्वल अक्षत ल्यावो सो अक्षत ल्यावहुरे ।

ललना अक्षय पदके हेत सो जिनको चढावो सो जिनको चढावहुरे ॥

दसलक्षण० । ललना नाचि राचि० ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥

जाही जुही मच कुंद गुलाब सु आनो गुलाब सु आनहुरे ।

ललना कामविध्वंसनहेत सो जिनको चढावो सो जिनको चढावहुरे ॥

दसलक्षण० । ललना नाचि राचि० ॥ पुष्पं । ४ ।

फेनीगोझा आदिक व्यंजन ल्यावो सो व्यंजन ल्यावहु रे ।

ललना छुदा विनासनहेत सो जिनको चढावो सु जिनकोचढावहुरे ।

दसलक्षण० । ललना नाचि राचि० । नैवेद्यं । ५ ।

वाती कपूर सुधारसो जिनढिंग ल्यावो सो जिनढिंग ल्यावहुरे ।

ललना मोहविनासनहेत सो जिनको चढावो सो जिनको चढावहुरे ॥

दसलक्षण० । ललना नाचि राचि० ॥ दीपं । ६ ॥

कृष्णागर वरधूपदसांग वनावो दसांग वनावहुरे ।

ललना होइ सुगंध अपार हुताशन खेइ वसुकर्म जलावहु रे ॥

दसलक्षण दसधर्म० । ललना नाचि राचि० । धूपं ।

श्रीफलसेव अनार बादाम सु ल्यावो बदाम सु ल्यावहुरे ।

ललना होय सुरस फल सार सो जिनको चढावो सु जिनको चढावहु रे ।

दसलक्षण दसधर्म० । ललना नाचि राचि० ॥ फलं ॥

जल आदिक शुभ द्रव्य सु आठ मिलावो सु आठ मिलावहु रे ।

ललना नाचि राचि गुणगाय सु अर्घ चढावो सु अर्घ चढावहुरे ॥

दसलक्षण दसधर्म० । ललना नाचि राचि० ॥ अर्घं ॥

(इसके बाद समुच्चय जयमाल ६७ में पृष्ठकी पढ़नी चाहिये ।)

अथ रत्नत्रयपूजा संस्कृत ।

श्रीमंतं सन्मतिं नत्वा श्रीमतः सुगुरूनपि ।
श्रीमदागमतः श्रीमान् वक्ष्ये रत्नत्रयार्चनं ॥ १ ॥
अनंतानंतसंसारकर्मसंबंधविच्छिदे ।
नमस्तस्मै नमस्तस्मै जिनाय परमात्मने ॥ २ ॥
ध्रौव्योत्पादव्ययानेकतत्त्वसंदर्शनात्विषे । नम० ॥ ३ ॥
संसारार्णवमग्नानां यः समुद्धर्तुमीश्वरः । नम० ॥ ४ ॥
लोकालोकप्रकाशात्मा यश्चैतन्यमयं महः ॥ नम० ॥ ५ ॥
येन ध्यानाग्निना दग्धं कर्मकक्षमलक्षणं । नम० ॥ ६ ॥
येनात्मात्मनि विज्ञातः परंपरमिदं वपुः । नम० ॥ ७ ॥
य एव परमं ज्योतिर्यः परंब्रह्ममयः पुमान् । नम० ॥ ८ ॥
सर्वानंदमयो नित्यं सर्वसत्त्वहितंकरः । नम० ॥ ९ ॥

इत्याद्यनेकधास्तोत्रैः स्तुत्वा साजिनपुंगवं ।
कुर्वे हृग्बोधचारित्रार्चनं संक्षेपतोऽधुना ॥ १० ॥

(इत्युच्चार्य पूजनप्रतिज्ञानार्थं रत्नत्रययंत्रस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्—यह श्लोक पढकर रत्नत्रय यंत्रके ऊपर पुष्प चढाने चाहिये ।)

ओं ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूपरत्नत्रय ! अत्रावतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

संसारदुःखज्वलनावगूढप्रगूढसंतापमलोपशांत्यै ।
सद्दर्शनज्ञानचारित्रपंक्तेर्जलस्य धारां पुरतो ददामि ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्दर्शनाय ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्-चारित्राचाराय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

रत्नत्रयं भूषितभव्यलोकमशोकमंतर्गतभावगम्यं ।
काश्मीरकर्पूरसुचंदनाद्यैः सुगन्धगंधैरहमर्चयामि । चंदनं ।
अक्षतमक्षतपुंजैः, शालीयैः शुद्धगंधिभिः शुद्धैः ।

दर्शनबोधचारित्रं त्रितयं तत्संयजे भक्त्या ॥ अक्षतं ।

विकासितकुसुमशतपत्रसुजातसमूहशोभया ।
घनकर्पूरनीरशुभचंदनचर्चितचारुगंधया ।
अलिकुलरणितकलितमधुरध्वनिश्यामसमूहरसालया ।
सकलितमातनोति रत्नत्रयमत्र पवित्रमालया । पुष्पं ।

प्रसिद्धसद्द्रव्यमनन्यलभ्यं, वचोगुरूणामिव साधुसिद्धं ।
सुदृष्टिसद्बोधचरित्ररत्न–त्रयाय नैवेद्यमहं ददामि । नैवेद्यं ।

दीपैः सुकर्पूरपरागभृंगै-- रंगद्भिरंगद्युतिदीप्यमानैः ।
सद्दर्शनज्ञानचारित्ररत्नत्रयं त्रयावाप्तिकरं यजेऽहं । दीपं ।

धूपैः कालागरुभिः विशुद्धसंशुद्धकर्मसंधूपैः ।
दर्शनज्ञानचारित्रत्रितयं संधूपयामि संसिद्ध्यै ॥ धूपं ।

पूगैरनर्घ्यैर्वरनालिकेरै-, र्नारिंगजंभीरकपित्थपुंजैः ।

रत्नत्रयं तर्पितभव्यलोकं, शक्त्यावलोकं तदहं यजामि ॥ फलं ॥
जलगंधाक्षतपुष्पै,-श्चरुदीपैर्धूपसत्फलैः सर्वैः ।
दर्शनबोधचरित्रं त्रितयं त्रेधा यजामहे भक्त्या ॥ अर्घ्यं ॥
मोहाद्रिसंकटतटीविकटप्रपात-संपादिने सकलसत्त्वहितंकराय ।
रत्नत्रयाय शुभहेतिसमप्रभाय, पुष्पांजलिं प्रविमलां ह्यवतारयामि ।

(पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।)

अथ दर्शनपूजा ।

परस्याभिमुखीश्रद्धा, शुद्धचैतन्यरूपतः ।
दर्शनं व्यवहारेण निश्चयेनात्मनः पुनः ॥ १ ॥
यदधिगम्य नराः शिवसंपदामधिपदं प्रतिपद्य विरेजिरे ।
तदिह मानसमात्मरसे लसद्विशतु दर्शनमष्टविधं मम ॥ २ ॥
ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः । अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्रावतर अवतर स्वाहा ॥ (इत्याह्वाननं)

अनंतानंतसंसारसागरोत्तारकारणम् ।
तीर्थं तीर्थकृतामत्र स्थापयामि सुदर्शनम् ॥ ३ ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रौं ह्रः । अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्वाहा । (इति प्रतिष्ठापनम् ।)

अष्टांगैरष्टधापूतमष्टैकगुणसंयुतं ।
मदाष्टकाविनिर्मुक्तं दर्शनं सन्निधापये ॥ ४ ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रौं ह्रः । अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

(इति सन्निधीकरणम्)

शरदिंदुसमाकारसारया जलधारया ॥
सम्यग्दर्शनमष्टांगं संयजे संयजावहं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसहितसम्यग्दर्शनाय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूरनीरकाश्मीरामिश्रसच्चंदनैर्घनैः ।
सम्यग्दर्शनमष्टांगं संयजे संयजावहं ॥ चंदनं ॥ २ ॥

अखंडैः खंडितानेकदुरितैः शालितंदुलैः। सम्यक्० । अक्षतं ३ ॥
शतपत्रशतानेकचारुचंपकराजिभिः । सम्यक्० ॥ पुष्पं० ॥ ४ ॥
न्यायैरिव जिनेंद्रस्य सत्राज्यैः पुष्टिकारिभिः, सम्यक्० । नैवेद्यं ॥५॥
चंचत्कांचनसंकाशैर्दीपैः सद्बोधिहेतुभिः । सम्यक्० ॥ दीपं ॥ ६ ॥
कृष्णागरुमहाद्रव्यधूपैः संधूपिताशुभैः । सम्यक्० । धूपं ॥ ७ ॥
पूगनारिंगजंभीरमातुलिंगफलोत्करैः । सम्यक्० । फलं ॥ ८ ॥
जलगंधकुसुममिश्रं, फलतंदुलकलितललिताढ्यं ।
सम्यक्त्वाय सुभव्यं भव्यां कुसुमांजलिं दद्यात् ॥ अर्घं ॥ ९ ॥
यस्य प्रभावाज्जगतां त्रयेऽपि पूज्या भवंतीह घना जनौघाः ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय निःशंकितांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥
ओं ह्रीं निःशंकितांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
सुदर्शनं येन विना प्रयुक्तं मंत्रं फलं नैव भवेज्जनानां ।

सुदुर्लभायामरपूजिताय निःकांक्षितांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥२॥

ओं ह्रीं निःकांक्षितांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

यदंगतः संयमवृक्षसेकी तस्मात्फलं संलभते शरीरी।
सुदुर्लभायामरपूजिताय निर्विंदितांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥३॥

ओं ह्रीं निर्विचिकित्सितांगायार्घं निर्वपामीति०।

यदुज्झितं चारुचरित्रमेतात्सिद्ध्यै भवेन्नैव मुनीश्वराणां।
सुदुर्लभायामरपूजिताय निर्मूढतांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥४॥

ओं ह्रीं निर्मूढतांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरेंद्रनागेंद्रनरेंद्रवंद्यैर्वंद्यं पदं यद्वशतो लभंते।
सुदुर्लभायामरपूजितायोपगूहनांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥५॥

ओं ह्रीं उपगूहनांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

भवंति वृद्धा गुणवृद्धिसिद्धा येनानुवृद्धा जगति प्रसिद्धाः।
सुदुर्लभायामरपूजिताय सुस्थापनांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥६॥

ओं ह्रीं सुस्थितिकरणांगायार्घं निर्वपामीति० ।

सुरत्नवद्दुर्लभतामुपेतं भव्यावनौ यस्यातिभासमानं ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय वात्सल्यतांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥७॥

ओं ह्रीं वात्सल्यांगायार्घं निर्वपामीति० ।

प्रबंधभूयिष्ठमलंचकार यच्छासने शासितभव्यलोकः ।
सुदुर्लभायामरपूजिताय प्रभावनांगाय नमोऽस्तु तस्मै ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं प्रभावनांगायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सौरभ्याहृतमद्भृंगसारया जलधारया ।
निःशंकितादिकान्यस्य सदंगानि यजामहे ॥

ओं ह्रीं निःशंकितादिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चारुचंदनकाश्मीरकर्पूरादिविलेपनैः ।निशंकि० । चंदनं ।
अक्षतैरक्षतानंतसौख्यदानाविधायकैः । निशं० ॥ अक्षतान् ॥

अ० ७२

जातीकुंदादिराजीवचंपकानेकपल्लवैः । निःशंकि० ॥ पुष्पं ॥
खाद्यमाद्यपदैः स्वाद्यैः सन्नाज्यैः सुकृतैरिव । निःशं० ॥ नैवेद्यं ॥
दशाग्रैः प्रस्फुरद्रूपैर्दीपैः पुण्यजनैरिव । निःशंकि० ॥ दीपं ॥
धूपैः संधूपितानेककर्माभिर्धूपदायिनां । निशं० । धूपं ।
नालिकेराम्रपूगादिफलैः पुण्यफलैरिव । निःशं० ॥ फलं ॥
जलगंधकुसुममिश्रं फलतंदुलकमलकलितललिताढ्यं ।
सम्यक्त्वाय सुभव्यं भव्या कुसुमांजलिं दद्यात् ॥ अर्घं ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनाय इदं जलं गंधं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं अर्घं यजामहे स्वाहा ।

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय नमः, ओं ह्रीं निःशंकितांगाय नमः, ओं ह्रीं निकांक्षितांगाय नमः, ओं ह्रीं निर्विचिकित्सितांगाय नमः, ओं ह्रीं निर्मूढांगाय नमः, ओं ह्रीं उपगूहनांगाय नमः, ओं ह्रीं सुस्थितीकरणांगाय नमः, ओं ह्रीं वात्सल्यांगाय नमः, ओं ह्रीं प्रभावनांगाय नमः । (इति जाप्यं कुर्यात्—इस मंत्रका जप करना चाहिये)

जयमाला ।

तत्त्वानां निश्चयो यस्तदिह निगदितं दर्शनं शुद्धबुद्धे-
स्तस्मादानष्टकर्माष्टकघनतिमिरो जायते ज्ञानसूरः ।
ज्ञानात्सिद्धिप्रसिद्धिं भुवि वचनमिदं शाश्वतं सिद्धिसौख्यं
चंचच्चंद्रांशुशुद्धं तदहमिह महे दर्शनं पूजयामि ॥

जय सम्यग्दर्शन दर्शिताश, कमलार्चित हतघनकर्मपाश ।
जय निःशंकित निश्चितसुतत्त्व, शतपत्रशतार्चित मुदितसत्त्व ॥
जय निःकांक्षित वर्जितविकार, कुंदार्चित कृतसंसारपार ।
जय निर्विचिकित्सित भावभंग, कुमुदप्रसूनपूजित सुसंग ॥
जय निर्मूढांग महाप्ररूढ, शुभचंपकचर्चित चारुरूढ ।
जय जय उपगूहन परमपक्ष, वरमल्लिकार्च्च दर्शितसुलक्ष ॥
जय जय सुस्थित सुस्थितिकरण, जातीकुसुमार्चित दुःखहरण ।

वात्सल्यमल्ल जय जय विशाल, केतकिदलपूजित दलितकाल ॥
प्रतिभावनांग जय जय वरेण, वसुविधकुसुमार्चित सुरेण ।

घत्ता ।

इति दर्शनमार्गं भावनिसर्गं दर्शनमिष्टमानिष्टहरं ।
सुमनःसत्पुंजं शर्मनिकुंजं, भव्यजनाय ददातु वरं ॥ १ ॥
पंचातिचारातिशयप्रपूतं, पंचप्रदं पंचमबोधहेतुं ।
सद्दर्शनं रत्नमनर्घ्यमर्घैर्भक्त्या सुरत्नैरहमर्चयामि ॥ २ ॥ अर्घ ।
मुक्ताः श्रेणिगता विभांति नितरां यत्प्रस्फुरत्तेजसा,
येनालंकृतविग्रहं ग्रहमुचं सिद्ध्यंगना मुंचति ।
यत्संसारमहार्णवे भवभृतां दुःप्राप्यमापृच्छतः
तत्सम्यक्त्वसुरत्नमर्चितधियां देयादनिंद्यं पदं ॥ रत्नांजलिं ।
अतुलसुखनिधानं सर्वकल्याणबीजं

जननजलधिपोतं भव्यसत्वैकपात्रं ।
दुरिततरुकुठारं पुण्यतीर्थप्रधानं
पिबतु जितविपक्षं दर्शनाख्यं सुधांबु ॥ इत्याशीर्वादः ।



अथ ज्ञानपूजा संस्कृत ।



प्रणम्य श्रीजिनाधीशमधीशं सर्वसंपदां ।
सम्यग्ज्ञानमहारत्नपूजां वक्ष्ये विधानतः ॥ १ ॥
श्रीजिनेंद्रस्य सद्बिंबमुत्तरेण महाधियः ।
पुस्तकं स्थापनीयं चेत्तस्यैवादर्शमध्यमं ॥ २ ॥
कल्पनातिगता बुद्धिः परभावविभाविका ।

ज्ञानं निश्चयतो ज्ञेयं तदन्यद्व्यवहारतः ॥ ३ ॥

ज्ञानाचारोऽष्टधा पुंसां पवित्रीकरणक्षमः ।
प्रभावेन तु पूजायै समागच्छतु निर्मलं ॥ ४ ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर स्वाहा ।

सम्यग्ज्ञानप्रभापूतं कर्मकक्षक्षयानलं ।
पूजाक्षणे तु गृह्णातु स्थित्वा पूजामनिंदितां ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (प्रतिष्ठापनं)

अचिंत्यमाहात्म्यमचिंत्यवैभवं भवार्णवोत्तीर्णविसारि सर्वतः ।
प्रबोधचारित्रमिहांतरंतरं निरंतरं तिष्ठतु सन्निधौ मम ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अष्टविधसम्यग्ज्ञानाचार ! मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधीकर

शरदिंदुसमाकारसारया जलधारया ।
बोधतत्त्वसमाचारं संयजे संयजावहं ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानचाराय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

कर्पूरनीरकाश्मीरामिश्रमच्चंदनैर्घनैः । बोध० । चंदनं ।

अखंडैः खंडितानेकदुरितैः शालितंदुलैः । बोध० । अक्षतान् ।

शतपत्रशतानेकचारुचंपकराजिभिः । बोध० । पुष्पं ।

न्यायैरिव जिनेंद्रस्य सान्नायैः पुष्टिकारिभिः । बोध० । नैवेद्यं ।

चंचत्कांचनसंकाशैर्दीपैः सद्दीप्तिहेतुभिः । बोध० । दीपं ।

कृष्णागरुमहाद्रव्यधूपैः संधूपिताशुभैः । बोध० । धूपं ।

पूगनारंगजंभीरमातुलिंगफलोत्करैः । बोध० । फलं ।

मोहाद्रिसंकटतटीविकटप्रपातसंपादिने सकलसत्त्वहितंकराय ।

बोधाय शक्रशुभहेतिसमप्रभाय पुष्पांजलिं प्रविमलां ह्यवतारयामि ॥

ओं ह्रीं सम्यग्बोधतत्त्वायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अतीवदुःखाशुभकर्मनाशप्रकाशिताशेषविशेषणाय ।

सुदुर्लभायामरपूजिताय प्रबोधतत्त्वाय नमोऽस्तु तस्मै ॥१॥

सुव्यंजनैर्व्यंगितव्यंगभावप्रभावनाभावितभाववृद्धं । सुदु० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं व्यंजनव्यंगितायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पदार्थसंबंधमुपेत्य नीतं समग्रतामग्रपदप्रदायि । सुदु० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं अर्थसमग्रायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

शब्दार्थश्रद्धानवितानमानद्वयेन बंधं सुनिबंधमेति । सुदु० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं तदुभयसमग्रायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पवित्रकालाध्ययनप्रभावप्रदर्शितानेककलाकलापं । सुदु० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं कालाध्ययनपवित्रायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

समृद्धशुद्धोपधिशुद्धमिद्धं सुभावमंतःस्फुरदंगसंगं । सुदु० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं उपाध्यानोपहितायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

विनीतचेतो वितनोति नीतिप्रणीतमानंत्यमनंतरूपं । सुदु० ॥७॥

ओं ह्रीं विनयलब्धप्रभावनांगायार्घं निर्वपामीति० ।

अपह्नुते निह्नुवतो गुरूणां गुरुप्रभावप्रहतांधकारे । सुदु० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं गुर्वाद्यपह्नवसमृद्धायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अनेकधामान्यवितानवृद्धं प्रभावितानंतगुणं गुणानां । सुदु० । ९ ।

ओं ह्रीं बहुमानोन्मुद्रितायार्घं निर्वपामीति० ।

सौरभ्याह्नतसद्भृंगसारया जलधारया ।
व्यंजनाद्यमलांगानि संयजे जन्मविच्छिदे ॥

ओं ह्रीं व्यंजनाद्यंगेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

चारुचंदनकाश्मीरकर्पूरादिविलेपनैः । व्यंजना० । चंदनं ।
अक्षयैरक्षयानंतसुखदानाविधायकैः । व्यंजना० । अक्षतान् ।
जातीकुंदादिराजीवचंपकानेकपल्लवैः । व्यंजना० । पुष्पं ।
खाद्यमाद्यपदैः स्वाद्यैः सत्राज्यैः सुकृतैरिव । व्यंजना० । नैवेद्यं ।

दृशाग्रैः प्रस्फुरद्रूपैर्दीपैः पुण्यजनैरिव । व्यंजना० । दीपं ।
धूपैः संधूपितानेककर्माभिर्धूपदायिनां । व्यंजना० । धूपं ।
नालिकेराम्रपूगादिफलैः पुण्यफलैरिव । व्यंजना० । फलं ।
मोहाद्रिसंकटतटीविकटप्रपातसंपादिने सकलसत्त्वहितंकराय ।
बोधाय शक्रशुभहेतिसमप्रभाय पुष्पांजलिं सविमलां ह्यवतारयामि ।
ओं ह्रीं सम्यग्बोधतत्त्वाय इदं जलं गन्धं अक्षतं चरुं दीप धूपं फलं अर्घं यजामहे स्वाहा ।
ओं ह्रीं व्यंजनव्यंजिताय नमः, ओं ह्रीं अर्थसमग्रायनमः, ओं ह्रीं तदुभयसमग्राय नमः, ओं ह्रीं कालाध्ययनपवित्राय नमः, ओं ह्रीं उपाध्यानोपहिताय नमः, ओं ह्रीं विनयलब्धि-प्रभावाय नमः, ओं ह्रीं गुर्वाद्यपह्नवसमृद्धाय नमः, ओं ह्रीं बहुमानोन्मुद्रिताय नमः (इस मंत्रकी जाप करना चाहिये)

जयमाला ।

व्योम्नीव व्यक्तरूपं विगतघनमलं भाति नक्षत्रमेकं
जीवाजीवादितत्त्वं स्थगितगतमलं यस्य दृग्गोचरस्थं ।

तत्त्वज्ञैः प्रार्थ्यते यत्प्रविपुलमतिभिर्मोक्षसौख्याय जज्ञे
तद्भव्यांभोजभानुं ललितगुणमणिं बोधमभ्यर्चयामि ॥

घनमोहतमःपटलापहरं यमसंयमसंगमभारधरं ।
भुवि भव्यपयोजविकासमहं प्रणमामि सुबोधदिनेशमहं ॥ १ ॥
कृतदुष्कृतकौशिकचारुहरं, भृतभूरिभवार्णवशोषकरं । भुवि० ॥२॥
निखिलामलवस्तुविकाशपदं, हतदुर्धरदुर्जयमष्टपदं । भुवि० ॥३॥
कलिकल्मषकर्दमशोषकरं, हृदयादवसर्पितकर्मजलं । भुवि० ॥ ४ ॥
जडतामपहारकसूर्यसमं, सुमनोद्भवसंगविभंगसमं । भुवि० ॥ ५ ॥
हृदयामललोचनलक्षमितं, निजभासुरभानुसहस्रयुतं । भुवि० ॥ ६ ॥
अलिकज्जलनीलतमालतमं, प्रतिमार्धिकभावनिशापगमं । भुवि० ॥७॥
निजमंडलमंडितलोकमुखं, नतसत्त्वसमर्पितसर्वसुखं । भुवि० ॥ ८ ॥

धत्ता ।

स्तुत्वेति बहुधा स्तोत्रैर्बहुभक्तिपरायणः ।
नानाभव्यैः समं धीमानर्घं चापि समुद्धरेत् ॥

संसारपाथोनिधिशोषकारि प्रबंधभूयिष्ठमनंतरूपं ।
सज्ज्ञानरत्नं बहुयत्नभृंगैः रत्नैः शुभैरर्चितमर्चयामि ॥ रत्नांजलिं ।

चिंतामूलमहाहृढस्तदमलस्थूलस्थलस्कंधमान्,
नांगोपांगसदागमैकविसरच्छाखोपशाखान्वितः ।
एकानेकविधावधिप्रभृतिभिः सत्पात्रपुष्पैर्वरै–
र्देयाद् बोधतरुः सदा शिवसुखान्यासेवितो ऽनेकशः ॥ आशीर्वादः ।

दुरिततिमिरहंसं मोक्षलक्ष्मीसरोजं
मदनभुजगमंत्रं चित्तमातंगसिंहं ।

व्यसनघनसमीरं विश्वतत्वैकदीपं

विषयसफरजालं ज्ञानमाराधय त्वं । इत्याशीर्वादः

इति ज्ञानपूजा ।

अथ चारित्रपूजा संस्कृत ।

देवश्रुतगुरून्नत्वा कृत्वा शुद्धिमिहात्मनः ।
सम्यक्चारित्ररत्नस्य वक्ष्ये संक्षेपतोऽर्चनं ॥ १ ॥
सम्यक्रत्नत्रयस्याथ पुस्तकं चोच्चरेण तु ।
गणेशपादुकायुग्मं स्नापयित्वा महोत्सवे ॥ २ ॥
गौणं चारित्रमाख्यातं यत्सावद्यानिवर्तनं ।
आनंदसांद्रमानात्मा पवित्रं परमार्थतः ॥ ३ ॥
त्रयोदशविधानेकभव्यलोकैकपावनं ।

चारित्राचारकमैंत कमलं विमलं शिवः ॥ ४ ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचार अत्रावतर अवतर स्वाहा (यंत्रके ऊपर पुष्पांजलि चढ़ाना चाहिये)

विषमकर्ममहाकुलपर्वतप्रकटकूटविभंजन सत्तपः ।
य इह तिष्ठतु तिष्ठतु मोक्षद त्रिमलहारि चरित्रमहामहः ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचार ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (प्रतिष्ठापनं)

सकलभव्यपयोजविकासकृत् प्रकटितारिप्रभावविभावकः ।
प्रबलमोहनिशाचरचारहृत् चरणभानुरुदेतु मनोंबरे ॥

ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचार ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (सन्निधिकरणं)

शरदिंदुसमाकारसारया जलधारया ।
सच्चारित्रसमाचारं संयजे संयजावहं ॥

ओं ह्रीं श्रीत्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूरनीरकाश्मीरमिश्रसच्चंदनैर्घनैः । सच्चारि० । चंदनं ।

अखंडैः खंडितानेकदुरितैः शालितंदुलैः । सच्चारि० । अक्षतान् ।

शतपत्रशतानेकचारुचंपकराजिभिः । सच्चारि० । पुष्पं ।

स्नात्रैरिव जिनेंद्रस्य सन्नाज्यैः पुष्टिकारिभिः । सच्चा० । नैवेद्यं ।

चंचत्कांचनसंकाशैर्दीपैः सद्दीप्तिहेतुभिः । सच्चारि० । दीपं ।

कृष्णागरुमहाद्रव्यधूपैः संधूपिताशुभैः । सच्चारि० । धूपं ।

पूगनारंगजंबीरमातुलिंगफलोत्करैः । सच्चारि० । फलं ।

कर्माणि हि महारोगा नराणां यत्प्रयोगतः ।

सच्चारित्रौषधायास्मै ददामि कुसुमांजलिं ॥ पुष्पांजलिं ।

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय इदं जलं गंधं अक्षतं पुष्पं नैवेद्यं दीपं धूपं फलं अर्घं यजामहे स्वाहा ।

प्राणातिपातविरतिरूपं सर्वत्र तत्त्वतः ।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं ॥ १ ॥
ओं ह्रीं अहिंसापूर्वमहाव्रतायार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
असत्याविरते प्राप्तपरभावमनेकधा । पूजया० ॥ २ ॥
ओं ह्रीं असत्यविरतिमहाव्रतायार्घं निर्वं० ।
चौर्याद्याघृत्तवृत्तात्मा सर्वथा सुमनीषिणां । पूजया० ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं चौर्यविरतिमहाव्रतायार्घं निर्वपा० ।
ग्राम्यधर्मविनिर्मुक्तं यद्वंद्यं त्रिदशैरपि । पूजया० ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं मैथुनविरतिमहाव्रतायार्घं नि० ।
सर्वग्रहविनिर्मुक्तमनेकग्रंथसंयुतं । पूजया० ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं परिग्रहविरतिमहाव्रतायार्घं नि० ।
सौरभ्याहृतसद्गंधसारया जलधारया ।

अहिंसाव्रतपूर्वाणि यजाम्यंगानि सर्वदा ॥

ओं ह्रीं अहिंसादिपंचमहाव्रतेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चारुचंदनकाश्मीरकर्पूरादिविलेपनैः । अहिंसा० । चंदनं ।

जातिकुंदादिराजीवचंपकानेकपल्लवैः । अहिंसा० । पुष्पं ।

अक्षतैरक्षतानंतसुखदानविधायकैः । अहिंसा० । अक्षतं ।

खाद्यमाद्यपदैः स्वाद्यैः सन्नाज्यैः सुकृतैरिव । अहिंसा० । नैवेद्यं ।

दशाग्रैः प्रस्फुरद्रूपैर्दीपैः पुण्यजनैरिव । अहिंसा० । दीपं ।

धूपैः संधूपितानेककर्मभिर्धूपदायिनां । अहिंसा० । धूपं ।

नालिकेरादिभिः पूगैः फलैः पुण्यफलैरिव । अहिंसा० । फलं ।

कर्माणि हि महारोगा नश्यंति यत्प्रयोगतः ।

सच्चारित्रौषधायास्मै ददामि कुसुमांजलिं ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय इदं जलं गंधं अक्षतं चरुं दीपं धूपं फलं अर्घं यजामहे स्वाहा ।

अधृक्षं सर्वलोकानां यन्मनस्तन्नियामकं ।
पूजयामि समीचीनं चारित्राचारमर्चितं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं मनोगुप्तये नमोऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

यद्वाग्व्यापारजानेकदोषसंगविवर्जितं । पूजया० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं वाग्गुप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

शरीरास्रवसंचारपरिहाराविनिर्मलं । पूजयामि० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं कायगुप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ईर्यासमितिसंशुद्धमतीचारविवर्जितं । पूजयामि० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं ईर्यासमितयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

चतुर्विधमहाभाषाशुद्धसंयमसंगतं । पूजयामि० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं भाषासमितयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

एषणासमितिसंशुद्धं यत्प्रवृद्धं विभागतः । पूजयामि० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं एषणासमितयेऽर्घ्यं नि० ।

यस्मिन्नादाननिक्षेपैः सतां संयमवृद्धये । पूजयामि० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं आदाननिक्षेपणासमितयेऽर्घ्यं नि० ।

व्युत्सर्गेण विशुद्धं यत्कर्मव्युत्सर्गकारणं । पूजयामि० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं प्रतिष्ठापनसमितयेऽर्घ्यं नि० ।

शरदिंदुसमाकारसारया जलधारया ।
मनोगुप्तिप्रपूर्वाणि यजाम्यंगानि संमुदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं मनोगुप्तिप्रभृतिचारित्राचारेभ्यो जलं ।

कर्पूरनीरकाश्मीरमिश्रसच्चंदनैर्घनैः । मनोगु० । चंदनं ।

अखंडैः खंडितानेकदुरितैः शालितंदुलैः । मनोगु० । अक्षतं ।

शतपत्रशतानेकचारुचंपकराजिभिः । मनोगु० । पुष्पं ।

न्यायैरिव जिनेन्द्रस्य सन्नाज्यैः शुद्धिकारिभिः । मनोगु० । नैवेद्यं
चंचत्कांचनसंकाशैर्दीपैः सद्दीप्तिहेतुभिः । मनोगु० । दीपं ।
कृष्णागरुमहाद्रव्यधूपैः संधूपिताशुभैः । मनोगु० । धूपं ।
पूगनारंगजंबीरमातुलिंगफलोत्करैः । मनोगु० । फलं ।
कर्माणि हि महारोगा नश्यंति यत्प्रयोगतः ।
सच्चारित्रौषधायास्मै ददामि कुसुमांजलिं । पुष्पांजलिं ।

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राचाराय इदं जलं गंधं अक्षतं पुष्पं चरुं दीपं धूपं फलं अर्घं यजामहे स्वाहा ।

ओं ह्रीं अहिंसापूर्वमहाव्रताय नमः, ओं ह्रीं असत्यविरतिमहाव्रताय नमः, ओं ह्रीं चौर्यविरतिमहाव्रताय नमः, ओं ह्रीं मैथुनविरतिमहाव्रताय नमः, ओं ह्रीं परिग्रहविरतिम- हाव्रताय नमः, ओं ह्रीं मनोगुप्तये नमः, ओं ह्रीं वाग्गुप्तये नमः, ओं ह्रीं कायगुप्तये नमः, ओं ह्रीं ईर्यासमितये नमः, ओं ह्रीं भाषासमितये नमः, ओं ह्रीं एषणासमितये नमः, ओं ह्रीं आदाननिक्षेपणसमितये नमः, ओं ह्रीं प्रतिष्ठापनासमितये नमः ॥ (इस मंत्रका जाप करना चाहिये)

अथ जयमाल ।

न द्वेषो द्वेषवृत्तिन्यरुणदृशि कृतानेकघोरोपसर्गे
यस्मिन् रागोऽपि न स्यात् मलयजकुसुमं दीयते भक्तिभाजा ।
स्वर्णे जीर्णे तृणे वा भवति समतुला पुण्यपापास्रवेऽपि ।
सम्यक्चारित्रमेतच्चदहमिह महे पूजयाम्यादरेण ॥

स्वात्मानं योगिनो यस्माल्लभंते शुद्धचेतसा ।
नमः समस्तसाराय चारित्रायामलत्विषे ॥ १ ॥

यानि कानि तु सौख्यानि जायंते तानि तद्वशात् ॥ नमः० ॥ २ ॥
दौर्गतानि तु दुःखानि यद्दते लभते नरः । नमः० ॥ ३ ॥
लोकालोकविभागात्मा यतः प्राप्नोति केवलं । नमः० ॥ ४ ॥
यच्छ्रद्धानान्नृणां जन्म सकलं सफलं भवेत् । नमः० ॥ ५ ॥

लक्ष्मीलोचनलक्ष्यांगं यत्करोति नरं वरं। नमः०॥ ६॥
चक्रिभिस्तीर्थकर्तृणां येनांचाति पदं नरः। नमः० ॥ ७॥
मुक्ता यस्मिन्पराः परं किंचयोगिनो योगजन्मकृत्। नमः० ॥ ८॥

विधायेत्थं मनःपूजां चारित्रस्य विशुद्धधीः॥
करोमि पूर्ववत्सर्वमघांदिमनिंदितं॥ ९॥

घत्ता।

स्तुत्वेति बहुधा स्तोत्रैर्बहुभक्तिपरायणः।
नानाभव्यैः समं लोके करोत्यानंदनाटनं॥ १०॥
अलंकृता येन सदाश्रयंति सत्साधवः सिद्धिवधूवरत्वं।
मालामुपक्षिप्य सुरत्नपूतां चारित्ररत्नं परिपूजयामि॥

(रत्नांजलिं निक्षिपेत्)

अन्तर्लीनमलीमसप्रसराजिल्लीलोल्लसत्केवलं

लोकालोकविलोकनक्रमगुणग्रामैकशुद्धिं नयत्।
येनालंकृतविग्रहा क्षणमपि क्षीणा नरा निर्मला
नैर्मल्यं प्रतिपद्य शाश्वततमं वंदे चरित्रं च तव ॥
ततोऽपि गुरुणा दत्तामाशिषं शिरसा सुधीः।
गृह्णाति ग्रहनिर्मुक्तो मुक्तये व्रतकारकः ॥
अनंतानंतसंसारकर्मविच्छित्तिकारकं।
देयाद् वः संपदः श्रीमच्चरणं शरणं नृणां ॥
विरम विरम संगान्मुंच मुंच प्रपंचं
विसृज विसृज मोहं बिद्धि बिद्धि स्वतत्त्वं।
कलय कलय वृत्तं पश्य पश्य स्वरूपं
कुरु कुरु पुरुषार्थं निर्वृतानंदहेतोः ॥
(इत्याशीर्वादः)

रयणत्तयसारउ भव्वपियारउ सयलह जीवह दुरियहरो ।
मुणियणगणमहियउ गुणगणसहियउ मिच्छमोहमयणासहरो ॥
पणवीस दोसवज्जिउपवित्तु, अइयाररहिउ वसुगुणविजुत्त ।
अट्ठंगइ णिम्मल विप्फुरंति, जो तिरहं देवत्तण विलिंति ॥
नारईय वि तित्थयरा हवंति, देव वि एइंदिय पउलहंति ।
जे मिच्छत्तय सम्मत्तहीण, दालिद्दय णासिय ते घणीण ॥ ३ ॥
मइसुयअवही मणपज्जणाण, केवलु वि कहिज्जइ मइपवाण ।
अण्णाणे तिण्णइ भणइ जोइ, कुच्छियमिच्छत्तजईस होइ ॥ ४ ॥
वोमुव णिम्मल पवणु वि असंग, परिअजिउविकणयरमुत्तिसंग ।
लोयालोहावि जयउ णियोइ, बहुभयेहजउ चारित्त होइ ॥ ५ ॥

पंचाइमहव्वय समिदिपंच, गुणणउ तिणिपयजियअवंच।
पुण पंचायारातिभेयजुत्त, मुणिधम्मकहहि देविंदवुत्त॥ २॥

घत्ता।

जिहिं तिण्णिविणराविरु गहण मुणेमुइ अंधउ आलस्सउ पंगुलवि।
जिणवरभासिय तिण्णतरइ विणु मुत्तिण भणइ गणि॥

इति चारित्र पूजा।

अथ रत्नत्रयपूजा भाषा प्रारभ्यते।

दोहा।

चहुंगतिफनिविषहरनमणि, दुखपावक जलधार।
शिवसुखसुधासरोवरी, सम्यकत्रयी निहार॥ १॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय! अत्रावतरावतर। संवौषट्।

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र मम सन्निहितं भव भव । वषट् ।

सोरठा ।

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल अति सोहनो ।
जनमरोगनिरवार, सम्यकरत्नत्रय–भजूं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय जन्मरोगविनाशनाय जलं निर्वपामि ॥ १ ॥

चंदन केसर गारि, परिमल महासुरंगमय । जन्मरो० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामि ॥ २ ॥

तंदुल अमल चितार, वासमती सुखदासके । जन्मरो० ॥३॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामि ॥ ३ ॥

महकैं फूल अपार, अलि गुंजैं ज्यों थुति करैं । जन्मरो० ॥४॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामि ॥ ४ ॥

लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगंधयुत । जन्मरो० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामि ॥ ५ ॥

दीपरतनमय सार, जोत प्रकाशै जगतमें । जन्मरो० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामि ॥ ६ ॥

धूप सुवास विथार, चंदन अगर कपूरकी । जन्मरो० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि ॥ ७ ॥

फलशोभा अधिकार, लौंग छुहारे जायफल । जन्मरो० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि ॥ ८ ॥

आठदरब निरधार, उत्तमसों उत्तम लिये । जन्मरो० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामि ॥ ९ ॥

सम्यकदरशनज्ञान, व्रत शिवमग तीनों मयी ।

पार उतारन जान, 'द्यानत' पूजों व्रतसहित ॥ १० ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १० ॥

दर्शनपूजा ।

दोहा ।

सिद्ध अष्टगुनमय प्रगट, मुक्तजीवसोपान ।
जिहबिन ज्ञानचरित अफल, सम्यकदर्श प्रधान ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

सोरठा ।

नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरै मल छय करै ।
सम्यक्दर्शनसार, आठअंग पूजौं सदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जल केसर घनसार, ताप हरै सीतल करै । सम्यकद० ॥ २

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै । सम्यकद० ॥३॥
ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अक्षतान निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥
पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै । सम्यकद० ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥
नेवज विविधप्रकार, छुधा हरै थिरता करै । सम्यकद० ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥
दीपज्योति तमहार, घटपट परकाशै महा । सम्यकद० ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥
धूप घ्रानसुखकार, रोग विघन जडता हरै । सम्यकद० ॥७॥
ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥
श्रीफलआदि विथार, निहचै सुरशिवफल करै । सम्यकद० ॥८॥
ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥
जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फलफूल चरु । सम्यकद० ॥९॥
ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति० ॥ ९ ॥

जयमाला ।

दोहा ।

आपआप निहचै लखै, तत्त्वप्रीति व्योहार ।
रहितदोष पच्चीस हैं, सहित अष्ट गुन सार ॥ १ ॥

चौपई मिश्रित गीता छंद ।

सम्यकदरशन रतन गहीजै । जिनवचमें संदेह न कीजै ।
इहभव विभवचाह दुखदानी । परभवभोग चहै मत प्रानी ॥
प्रानी गिलान न करि अशुचि लखि, धरमगुरुप्रभु परखिये ।
परदोष ढकिये धरम डिगतेको, सुथिर कर हरषिये ॥
चहुसंघको वात्सल्य कीजे, धरमकी परभावना ।
गुन आठसों गुन आठ लहिकैं, इहां फेर न आवना ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसहितपंचविंशतिदोषरहिताय सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

ज्ञानपूजा।

दोहा।

पंचभेद जाके प्रगट, ज्ञेयप्रकाशन भान ॥
मोह-तपन-हर-चंद्रमा, सोई सम्यकज्ञान ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर, संवौषट्।
ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ, ठः ठः।
ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट्।

सोरठा।

नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरै मल छय करै।
सम्यक्ज्ञान विचार, आठभेद पूजौं सदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जलकेसर घनसार, ताप हरै शीतल करै। सम्यकज्ञा० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै। सम्यकज्ञा० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

पहुपसुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै। सम्यकज्ञा० ॥ ४ ॥ पुष्पं

नेवज विविधप्रकार, छुधा हरै थिरता करै। सम्यकज्ञा० ॥ ५ ॥ नैवेद्यं।

दीपज्योतितमहार, घटपट परकाशै महा। सम्यकज्ञा० ॥ ६ ॥ दीपं।

धूप घ्रानसुखकार, रोग विघन जडता हरै। सम्यकज्ञा० ॥ ७ ॥ धूपं।

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुरशिवफल करै। सम्यकज्ञा० ॥ ८ ॥ फलं।

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु। सम्यकज्ञा० ॥ ९ ॥ अर्घ्यं।

अथ जयमाला।

दोहा।

आप आप जानै नियत, ग्रंथपठन व्योहार।
संशय विभ्रम मोह विन, अष्टअंग गुनकार ॥ १ ॥

चौपई मिश्रित गीता छंद ।

सम्यकज्ञानरतन मन भाया, आगम तीजा नैन बताया ।
अच्छर शुद्ध अरथ पहिचानो, अच्छर अरथ उभय संग जानौं ॥
जानौं सुकालपठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइये ।
तपरीति गहि बहु मान दैकैं, विनयगुन चित लाइये ॥
ये आठ भेद करम उछेदक, ज्ञानदर्पन देखना ।
इस ज्ञानहीसौं भरत सीझा, और सब पटपेखना ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अथ चारित्रपूजा भाषा ।

दोहा ।

विषयरोगऔषध महा, दवकषायजलधार ।
तीर्थंकर जाकौं धरैं, सम्यकचारितसार ॥ १ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र मम सन्निहितं भव भव । वषट् ।

। सोरठा ।

नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरै मल छय करै ।
सम्यकचारित सार, तेरहविध पूजों सदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जल केशर घनसार, ताप हरै शीतल करै । सम्यकचारित० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै । सम्यकचा० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

पहुपसुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै । सम्यकचारित० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नेवज ... विधप्रकार, छुधा हरै थिरता करै । सम्यकचा० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

दीपजोति तमहार, घटपट परकाशै महा । सम्यकचा० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

धूप घ्रान सुखकार, रोग विघन जडता हरै । सम्यकचारित० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा । ७ ।

श्रीफलआदि विथार, निहचै सुराशिवफल करै । सम्यकचारित० ॥८॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु । सम्यकचा० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधचारित्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा ।

आपआप थिर नियत नय, तपसंजम व्योहार ।
स्वपर दया दोनों लिये, तेरहविध दुखहार ॥ १ ॥

चौपई मिश्रित गीता छन्द।

१० सम्यकचारित रतन संभालो। पांच पाप तजिकैं व्रत पालो।
१० पंचसमिति त्रय गुपति गहीजै, नरभव सफल करहु तन छीजै।
छीजै सदा तनको जतन यह, एक संजम पालिये।
बहु रुल्यो नरकनिगोदमाहीं, विषयकषायनि टालिये।
शुभकरमजोग सुघाट आया, पार हो दिन जात है।
'द्यानत' धरमकी नाव बैठो, शिवपुरी कुशलात है॥ ३॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

अथ समुच्चय जयमाला।

दोहा।

सम्यकदरशन ज्ञान व्रत, इन विन मुकति न होय।
अंध पंगु अरु आलसी, जुदे जलैं दव-लोय॥ १॥

चौपाई १६ मात्रा ।

जापै ध्यान सुथिर बन आवै । ताके करमबंध कट जावै ।
तासों शिवातिय प्रीति बढावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ २ ॥
ताकों चहुंगतिके दुख नाहीं । सो न परै भवसागरमाहीं ॥
जनमजरामृतु दोष मिटावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ ३ ॥
सोई दशलच्छनको साधै । सो सोलहकारण आराधै ।
सो परमातम पद उपजावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ ४ ॥
सोई शक्रचाक्रिपद लेई । तीनलोकके सुख विलसेई ॥
सो रागादिक भाव बहावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ ५ ॥
सोई लोकालोक निहारै । परमानंददशा विसतारै ॥
आप तिरै औरन तिरवावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ ६ ॥

दोहा।

एकस्वरूपप्रकाश निज, वचन कह्यो नाहिं जाय।
तीनभेद व्योहार सब, द्यानतकों सुखदाय ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अर्घके बाद विसर्जन करना चाहिये)

अथ चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रपूजा।

सोरठा।

परम पूज्य चौवीस, जिहं जिहं थानक शिव गये।
सिद्धभूमि निशदीस, मनवचतन पूजा करों ॥ १ ॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र अवतरत अवतरत। संवौषट्।
ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत। ठः ठः।
ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत। वषट्।

गीताछंद ।

शुचि क्षीरदधिसम नीर निरमल, कनकझारीमें भरौं ।
संसारपार उतार स्वामी, जोरकर विनती करौं ॥
सम्मेदगिरि गिरिनार चंपा, पावापुरि कैलासकों ।
पूजों सदा चौवीसजिननिर्वाणभूमिनिवासकौं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

केसर कपूर सुगंध चंदन, सलिल शीतल विस्तरौं ।
भवपापको संताप मेटो, जोर कर विनती करौं । सम्मे० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यश्चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

मोती समान अखंड तंदुल, अमल आनंदधरि तरौं ।
औगुन हरौ गुन करौ हमको, जोर कर विनती करौं । सम्मे० ॥३॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्योऽक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

शुभफूलरास सुवासरासित, खेद सब मनकी हरौं।
दुखधाम काम विनाश मेरो, जोरकर विनती करौं। सम्मे०॥४॥
ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नेवज अनेकप्रकार जोग, मनोग धरि भय परिहरौं।
यह भूखदूषन टार प्रभुजी, जोर कर विनती करौं। सम्मे० ॥५॥
ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

दीपक प्रकाश उजास उज्वल, तिमिरसेती नहिं डरौं।
संशयविमोहविभर्म-तमहर, जोर कर विनती करौं। सम्मे० ॥६॥
ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

शुभ धूप परम अनूप पावन, भाव पावन आचरौं।
सब करमपुंज जलाय दीजे, जोर कर विनती करौं। सम्मे० ॥७॥
ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

बहु फल मंगाय चढाय उत्तम, चारगतिसौं निरवरौं।
निहचै मुकतिफल देहु मोकौं, जोर कर विनती करौं। सम्मे० ॥८॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल गंध अच्छत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौं।
'द्यानत' करो निरभय जगततैं, जोर कर विनती करौं। सम्मे० ॥९॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाला।

सोरठा।

श्रीचौबीसजिनेश, गिरिकैलासादिक नमो।
तीरथमहाप्रदेश, महापुरुषनिरवाणतैं ॥ १ ॥

चौपाई १६ मात्रा।

नमौं रिषभ कैलास पहारं। नेमिनाथ गिरनार निहारं॥
वासुपूज्य चंपापुर बंदौं। सनमति पावापुर अभिनंदौं ॥ २ ॥

वंदौं अजित अजितपददाता। वंदौं संभवभवदुखघाता ॥
वंदौं अभिनंदन गणनायक। वंदौं सुमति सुमतिके दायक ॥ २ ॥
वंदौं पदम मुकतिपदमाधर। वंदौं सुपार्स आशपासा हर ॥
वंदौं चंदप्रभ प्रभु चंदा। वंदौं सुविधि सुविधिनिधिकंदा ॥ ४ ॥
वंदौं शीतल अघतपशीतल। वंदौं श्रियांस श्रियांस महीतल ॥
वंदौं विमल विमलउपयोगी। वंदौं अनंत अनंतसुभोगी ॥ ५ ॥
वंदौं धर्म धर्मविसतारा। वंदौं शांति शांतमनधारा ॥
वंदौं कुंथु कुथूरखवालं। वंदौं अर अरिहर गुनमालं ॥ ६ ॥
वंदौं मल्लि काममल चूरन। वंदौं मुनिसुव्रत व्रतपूरन ॥
वंदौं नमि जिन नमितसुरासुर। वंदौं पास पासभ्रमजरहर ॥ ७ ॥
वीसौं सिद्ध भूमि जा ऊपर। शिखरसम्मेद महागिरिभूपर ॥
एकबार वंदै जो कोई। ताहि नरकपशुगति नहिं होई ॥ ८ ॥

नरगतिनृप सुर शक्र कहावै। तिहुंजग भोग भोगि शिव पावै ॥
विघनविनाशक मंगलकारी। गुणविलास वंदें नरनारी ॥ ९ ॥

छंद घत्ता।

जो तीरथ जावै पाप मिटावै, ध्यावै गावै भगति करै।
ताको जस कहिये संपति लहिये, गिरिके गुण को बुध उचरै ॥ १० ॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

(अर्घ्यके बाद विसर्जन करना चाहिये)

कविवर वृन्दावनजीकृत

समुच्चयचौवीसी पूजा।

छंद कवित्त।

वृषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति पदम सुपास जिनराय।

चंद पुहुप शीतल श्रेयांस नमि, वासुपूज पूजितसुरराय ॥
विमल अनंत धरमजसउज्ज्वल, शांति कुंथ अर मल्लि मनाय ॥
मुनिसुव्रत नमिनेमि पासप्रभु, वर्द्धमानपद पुष्प चढाय ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्, ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

(चाल — द्यानतरायकृत नंदीश्वरद्वीपाष्टककी तथा गर्भाराग आदि अनेक चालोमें)

मुनिमनसम उज्ज्वल नीर, प्रासुक गंध भरा ।
भरि कनककटोरी धीर, दीनी धार धरा ॥
चौवीसों श्रीजिनचंद, आनंदकंद सही ।
पदजजत हरत भवफंद, पावत मोच्छमही ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

गोशीर कपूर मिलाय, केशर रंगभरी ।
जिनचरनन देत चढाय, भवआताप हरी ॥ चौवीसों० ॥ २ ॥
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामि० ॥

तंदुल सित सोमसमान, सुंदर अनियारे ।
मुकताफलकी उपमान, पुंज धरों प्यारे ॥ चौवीसों० ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामि० ।

वरकंज कदंब कुरंड, सुमन सुगंध भरे ।
जिन अग्र धरों गुनमंड, काम कलंक हरे ॥ चौवीसों० ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति० ॥

मनमोदनमोदक आदि, सुंदर सद्य बने ।
रसपूरित प्रासुक स्वाद, जजत छुधादि हने ॥ चौवीसों० ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामि० ॥

तमखंडन दीप जगाय, धारों तुम आगे।
सब तिमिरमोह छय जाय, ज्ञानकला जागे ॥ चौवीसों० ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामि० ॥

दशगंध हुताशनमाहिं, हे प्रभु खेवत हों।
मिस धूम करम जरि जांहिं, तुम पद सेवत हों ॥ चौवीसों० ॥७॥
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि० ॥

शुचि पक्क सुरस फल सार, सब ऋतुके ल्यायो ।
देखत दृगमनको प्यार, पूजत सुख पायो ॥ चौवीसों० ॥ ८ ॥
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि० ॥

जल फल आठों शुचिसार, ताको अर्घ करों।
तुमको अरपों भवतार, भव तरि मोक्ष वरों ॥
चौवीसों श्रीजिनचंद, आनंदकंद सही।

पदजजत हरत भवफंद, पावत मोक्षमही ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामि० ।

जयमाला

दोहा ।

श्रीमत तीरथनाथपद, माथ नाय हितहेत ।
गाऊं गुणमाला अबै, अजर अमरपददेत ॥ १ ॥

छंद घत्तानंद ।

जय भवतमभंजन जनमनकंजन, रंजन दिनमनि स्वच्छकरा ।
शिवमगपरकाशक अरिगननाशक, चौवीसौं जिनराज वरा ॥ २ ॥

छन्द पद्धरी ।

जय रिषभदेव रिषिगन नमंत । जय अजित जीत वसुअरि तुरंत ॥
जय संभव भवभय करत चूर । जय अभिनंदन आनंदपूर ॥ ३ ॥

जय सुमति सुमतिदायक दयाल । जय पद्म पद्मदुति तनरसाल ॥
जय जय सुपास भवपासनाश । जय चंद चंदतनदुतिप्रकाश ॥ ४ ॥
जय पुष्पदंत दुतिदंत सेत । जय शीतल शीतलगुननिकेत ।
जय श्रेयनाथ नुतसहसभुज्ज । जय वासवपूजित वासुपुज्ज ॥ ५ ॥
जय विमल विमलपददेनहार । जय जय अनंत गुनगन अपार ॥
जय धर्म धर्म शिवशर्मदेत । जय शांति शांतिपुष्टीकरेत ॥ ६ ॥
जय कुंथु कुंथुवादिक रखेय । जय अर जिन वसुअरि छय करेय ॥
जय मल्लि मल्ल हतमोहमल्ल । जय मुनिसुव्रत व्रतशल्लदल्ल ॥ ७ ॥
जय नमि नित वासवनुत सपेम । जय नेमिनाथ वृषचक्रनेम ॥
जय पारसनाथ अनाथनाथ । जय वर्द्धमान शिवनगरसाथ ॥ ८ ॥

घत्तानंद छंद ।

चौवीस जिनंदा आनंदकंदा, पापनिकंदा सुखकारी ।

तिनपदजुगचंदा उदय अमंदा, वासववंदा हितधारी ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सोरठा ।

भुक्तिमुक्तिदातार चौवीसों जिनराजवर ।
तिनपद मनवचधार, जो पूजै सो शिव लहै ॥ १० ॥

इत्याशीर्वादः । पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

सप्तऋषि पूजा ।

छप्पय छंद ।

प्रथम नाम श्रीमन्व दुतिय स्वर मन्व ऋषीश्वर ।
तीसर मुनि श्रीनिचय सर्वसुन्दर चौथो वर ॥

पंचम श्रीजयवान विनयलालस षष्ठम भनि।
सप्तम जयमित्राख्य सर्वचारित्रधामगनि ॥
ये सातौं चारणऋद्धिधर, करूं तासु पद थापना।
मैं पूजूं मनवचकायकरि, जो सुख चाहूं आपना ॥

ओं ह्रीं चारणर्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वरा ! अत्रावतरत अवतरत संवौषट्। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

गीता छंद।

शुभतीर्थउद्भव जल अनूपम, मिष्ट शीतल लायके ॥
भव तृषा कंद निकंद कारण, शुद्ध घट भरवायके ॥
मन्वादि चारण ऋद्धिधारक, मुनिनकी पूजा करूं।
ता करें पातिक हरें सारे, सकल आनंद विस्तरूं ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलालसजयमित्रर्षिभ्यो जलं।

श्रीखण्ड कदलीनन्द केशर, मन्द मन्द घिसायके।
तसु गंध प्रसराति दिगदिगन्तर, भर कटोरी लायके ॥ मन्वा० ॥
ओं ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलालसजयमित्रर्षिभ्यश्चंदनं ॥
अति धवल अक्षत खण्डवर्जित, मिष्ट राजनभोगके।
कलधौत थारा भरत सुन्दर, चुनित शुभ उपयोगके ॥ मन्वा० ॥
ओं ह्रीं मन्वादिसप्तर्षिभ्यो अक्षतान् निर्वपामि० ॥ ३ ॥
बहु वर्ण सुवरण सुमन आछे, अमल कमल गुलाबके।
केतकी चम्पा चारु मरुआ, चुने निज कर चावके ॥ म० ॥
ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो पुष्पं निर्वपामि० ॥ ४ ॥
पकवान नाना भांति चातुर, रचित शुद्ध नये नये।
सद्मिष्ट लाडू आदि भर बहु, पुरटके थारा लये ॥ म० ॥
ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो नैवेद्यं निर्वपा० ॥ ५ ॥

कलधौत दीपक जडित नाना, भरित गोघृतसारसों।
अतिज्वलित जगमग जोति जाकी, तिमिर नाशनहार सो॥ म० ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो दीपं निर्वपामि० ॥ ६ ॥

दिक्चक्र गंधित होत जाकर, धूप दशअंगी कही।
सो लाय मन वच काय शुद्ध, लगायकर खेऊं सही ॥ म० ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो धूपं निर्वपामि० ॥ ७ ॥

वर दाख खारक अमित प्यारे, मिष्ट चुष्ट चुनायके।
द्रावडी दाडिम चारु पुंगी, थाल भर भर भायके ॥ म० ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो फलं निर्वपामि० ॥ ८ ॥

जल गन्ध अक्षत पुष्प चरु वर, दीप धूप सु लावना।
फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित। अर्घ कीजे पावना ॥ म० ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि० ॥ ९ ॥

अथ जयमाला।

त्रिभंगी छंद।

बंदू ऋषिराजा, धर्मजहाजा, निज पर काजा, करते भले।
करुणाके धारी, गगनविहारी, दुख अपहारी, भरम दले।
काटत जमफंदा, भविजन वृन्दा, करत अनंदा, चरणनमें।
जो पूजें ध्यावें मंगल गावें, फेर न आवें भववनमें॥

पद्धरी छंद।

जय श्रीमनु मुनिराजा महंत। त्रस थावरकी रक्षा करंत॥
जय मिथ्यातमनाशक पतंग। करुणारसपूरित अंग अंग॥ १॥
जय श्रीस्वरमनु अकलंकरूप। पद सेव करत नित अमर भूप॥
जय पंच अक्ष जीते महान। तप तपत देह कंचन समान॥ २॥
जय निचय सप्त तत्त्वार्थभास। तप रमातनो तनमें प्रकाश॥

जय विषयरोधसंबोध भान । परणतिके नाशन अचल ध्यान ॥ ३ ॥
जय जयहि सर्वसुन्दर दयाल । लखि इन्द्रजालवत जगतजाल ॥
जय तृष्णाहारी रमण राम । निज परणतिमें पायो विराम ॥ ४ ॥
जय आनंदघन कल्याणरूप । कल्याण करत सबको अनूप ।
जय मदनाशन जयवान देव । निरमद विरचित सब करत सेव ॥५॥
जय जेय विनयलालस अमान । सब शत्रु मित्र जानत समान ॥
जै कृशितकाय तपके प्रभाव । छवि छटा उडति आनंददाय ॥ ६ ॥
जै मित्र सकल जगके सुमित्र । अनगिनत अधम कीने पवित्र ॥
जै चंद्रवदन राजीव–नयन । कबहूं विकथा बोलत न वयन ॥ ७ ॥
जै सातो मुनिवर एक संग । नित गगन गमन करते अभंग ॥
जय आये मथुरापुर मंझार । तहं मरी रोगको अति प्रचार ॥ ८ ॥
जय जय तिन चरणनिके प्रसाद । सब मरी देवकृत भई बाद ॥

जय लोक करे निर्भय समस्त। हम नमत, सदा नित जोरि हस्त॥९॥
जय ग्रीषम ऋतु पर्वतमंझार। नित करत अतापन योग सार॥
जय तृषा परीषह करत जेर। कहुं रंच चलत नहिं मन सुमेर॥१०॥
जय मूल अठाइस गुणन धार। तप उग्र तपत आनंदकार॥
जय वर्षाऋतुमें वृक्षतीर। तहं अति शीतल झेलत समीर॥ ११॥
जय शीत काल चौपट मंझार। कै नदी सरोवर तट विचार॥
जय निवसत ध्यानारूढ होय। रंचक नहिं मटकत रोम कोय॥१२॥
जय मृतकासन वज्रासनीय। गोदूहन इत्यादिक गनीय॥
जय आसन नाना भांति धार। उपसर्ग सहित ममता निवार १३
जय जपत तिहारो नाम कोय। लख पुत्र पौत्र कुलवृद्धि होय॥
जय भरे लक्ष अतिशय भंडार। दारिद्रतनो दुख होय छार॥ १४॥
जय चोर अग्नि डांकिन पिशाच। अरु ईति भीति सब नसत सांच॥

जय तुम सुमरत सुख लहत लोक। सुर असुर नवत पद देत धोक ॥

रोला।

१०० ये सातों मुनिराज महातपलछमी धारी।
परम पूज्यपद धरैं सकल जगके हितकारी ॥
जो मन वच तन शुद्ध होय सेवै औ ध्यावै ॥
सो जन मनरंगलाल अष्ट ऋद्धिनिकों पावै ॥

दोहा।

नमन करत चरनन परत, अहो गरीबनिवाज।
पंच परावर्तननितैं, निरवारौ ऋषिराज ॥ १०१

ओं ह्रीं श्रीसप्तर्षिभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

संस्कृत स्वयंभूस्तोत्रम् ।

येन स्वयंबोधमयेन लोका आश्वासिता केचन वित्तकार्ये ।
प्रबोधिता केचन मोक्षमार्गे, तमादिनाथं प्रणमामि नित्यम् ॥ १ ॥
इंद्रादिभिः क्षीरसमुद्रतोयैः संस्नापितो मेरुगिरौ जिनेन्द्रः ।
यः कामजेता जनसौख्यकारी, तं शुद्धभावादजितं नमामि ॥ २ ॥
ध्यानप्रबंधप्रभवेन येन निहत्य कर्मप्रकृतीः समस्ताः ।
मुक्तिस्वरूपां पदवीं प्रपेदे तं संभवं नौमि महानुरागात् ॥ ३ ॥
स्वप्ने यदीया जननी क्षपायां गजादिवह्न्यंतमिदं ददर्श ।
यत्तात इत्याह गुरुः परोऽयं नौमि प्रमोदादभिनंदनं तम् ॥ ४ ॥
कुवादिवादं जयता महांतं नयप्रमाणैर्वचनैर्जगत्सु ।
जैनं मतं विस्तारितं च येन तं देवदेवं सुमतिं नमामि ॥ ५ ॥

यस्यावतारे सति पितृधिष्णे ववर्ष रत्नानि हरेर्निदेशात् ।
धनाधिप: षण्णवमासपूर्वं पद्मप्रभं तं प्रणमामि साधुं ॥ ६ ॥
नरेन्द्रसर्पेश्वरनाकनाथै: वाणी भवंती जगृहे स्वचित्ते ।
यस्यात्मबोध: प्रथित: सभायामहं सुपार्श्वं ननु तं नमामि ॥ ७ ॥
सत्प्रातिहार्यातिशयप्रपन्नो गुणप्रवीणो हतदोषसंग: ।
यो लोकमोहांधतम: प्रदीपश्चन्द्रप्रभं तं प्रणमामि भावात् ॥ ८ ॥
गुप्तित्रयं पंच महाव्रतानि पंचोपदिष्टा समितिश्च येन ।
बभाण यो द्वादशधा तपांसि तं पुष्पदंतं प्रणमामि देवं ॥९॥
ब्रह्मव्रतांतो जिननायकेनोत्तमक्षमादिर्दशधापि धर्म: ।
येन प्रयुक्तो व्रतबंधबुद्ध्या तं शीतलं तीर्थकरं नमामि ॥ १० ॥
गणे जनानंदकरे धरांते विध्वस्तकोपे प्रशमैकचित्ते ।
यो द्वादशांगं श्रुतमादिदेश श्रेयांसमानौमि जिनं तमीशं ॥ ११ ॥

मुक्त्यंगनाय रचिता विशाला रत्नत्रयीशेखरता च येन ।
यत्कंठमासाद्य बभूव श्रेष्ठा तं वासुपूज्यं प्रणमामि वेगात् ॥ १२ ॥
ज्ञानी विवेकी परमस्वरूपी ध्यानी व्रती प्राणिहितोपदेशी ।
मिथ्यात्वघाती शिवसौख्यभोजी बभूव यस्तं विमलं नमामि ॥ १३ ॥
आभ्यंतरं बाह्यमनेकधा यः परिग्रहं सर्वमपाचकार ।
यो मार्गमुद्दिश्य हितं जनानां वंदे जिनं तं प्रणमाम्यनंतं ॥१४॥
सार्द्धं पदार्था नव सप्ततत्वैः पंचास्तिकायाश्चन कालकायाः ।
षड् द्रव्यनिर्णीतिरलोकयुक्तिर्येनोदितं तं प्रणमामि धर्मम् ॥१५॥
यश्चक्रवर्ती भुवि पंचमोऽभूच्छ्रीनंदनो द्वादशको गुणानां ।
निधिप्रभुः षोडशको जिनेन्द्रस्तं शांतिनाथं प्रणमामि भेदात् ॥१६॥
प्रशंसितो यो न बिभर्ति हर्षं विराधितो यो न करोति रोषं ।
शीलव्रताद् ब्रह्मपदं गतो यस्तं कुंथुनाथं प्रणमामि हर्षात् ॥ १७ ॥

य: संस्तुतो य: प्रणत: सभायां य: सेवितोऽन्तर्गुणपूरणाय।
पदाच्युतैः केवलिभिर्जिनस्य देवाधिदेवं प्रणमाम्यरं तम् ॥ १८ ॥
रत्नत्रयं पूर्वभवांतरे यो, व्रतं पवित्रं कृतवानशेषं।
कायेन वाचा मनसा विशुद्ध्या, तं मल्लिनाथं प्रणमामि भक्त्या ॥
ब्रुवन्नमः सिद्धिपदाय वाक्य,-मित्यग्रहीद्यः स्वयमेव लोचं।
लौकांतिकेभ्यः स्तवं निशम्य, वंदे जिनेशं मुनिसुव्रतं तं ॥ २० ॥
विद्यावते तीर्थकराय तस्मा,-याहारदानं ददतो विशेषात्।
गृहे नृपस्याजानि रत्नवृष्टिः स्तौमि प्रणमान्नयतो नमिं तम् ॥२१॥
राजीमतीं यः प्रविहाय मोक्षे, स्थितिं चकारापुनरागमाय।
सर्वेषु जीवेषु दयां दधान,-स्तं नेमिनाथं प्रणमामि भक्त्या ॥२२॥
सर्पाधिराजः कमठारितोयै,-र्ध्यानास्थितस्यैव फणावितानैः।
यस्योपसर्गं निरवर्तयत्तं, नमामि पार्श्वं महतादरेण ॥ २३ ॥

भवार्णवे जंतुसमूहमेन,-माकर्षयामास हि धर्मपोतात्।
मज्जंतमुद्वीक्ष्य य एनसापि, श्रीवर्द्धमानं प्रणमाम्यहं तं ॥ २४ ॥

यो धर्मं दशधा करोति पुरुषः स्त्री वा कृतोपस्कृतं
सर्वज्ञध्वनिसंभवं त्रिकरणव्यापारशुद्ध्यानिशं।
भव्यानां जयमालया विमलया पुष्पांजलिं दापय-
न्नित्यं सांश्रियमातनोति सकलं स्वर्गापवर्गस्थितिं ॥ २५ ॥

अथ स्वयंभूस्तोत्र भाषा।

—o—

चौपाई।

राजविषै जुगलनि सुख कियो। राज त्याग भवि शिवपद लियो॥
स्वयंबोध स्वंभू भगवान। बंदौं आदिनाथ गुणखान ॥ १ ॥

इंद्र खीरसागरजल लाय । मेरु न्हवाये गाय बजाय ।
मदनविनाशक सुखकरतार । बंदौं अजित अजितपदकार ॥ २ ॥
शुक्लध्यानकरि करमविनाशि । घाति अघाति सकल दुखराशि ॥
लह्यो मुकतिपदसुख अविकार । बंदौं शंभव भवदुख टार ॥ ३ ॥
माता पच्छिम रयनमंझार । सुपने सोलह देखे सार ॥
भूप पूछि फल सुनि हरषाय । बंदौं अभिनंदन मनलाय ॥ ४ ॥
सब कुवादवादीसरदार । जीते स्याद्वादधुनिधार ॥
जैनधरमपरकाशक स्वाम । सुमतिदेवपद करहुं प्रनाम ॥ ५ ॥
गर्भअगाऊ धनपति आय । करी नगरशोभा अधिकाय ॥
बरसे रतन पंचदश मास । नमौं पदमप्रभु सुखकी रास ॥ ६ ॥
इंद फनिंद नरिंद्र त्रिकाल । बानी सुनि सुनि होंहि खुस्याल ॥
द्वादशसभा ज्ञानदातार । नमौं सुपारसनाथ निहार ॥ ७ ॥

सुगुन छियालिस हैं तुममाहिं। दोष अठारह कोई नाहिं ॥
मोहमहातमनाशक दीप। नमौं चंद्रप्रभ राख समीप ॥ ८ ॥
द्वादसविधि तप करम विनाश। तेरह भेद चारित परकाश ॥
निज अनिच्छ भविइच्छकदान। बंदौ पुहुपदंत मनआन ॥ ९ ॥
भविसुखदाय सुरगतैं आय। दशविधि धरम कह्यो जिनराय ॥
आपसमान सबनि सुखदेह। बंदौं शीतल धर्मसनेह ॥ १० ॥
समता सुधा कोपविषनाश। द्वादशांगवानी परकाश ॥
चारसंघ आनंददातार। नमौं श्रेयांस जिनेश्वर सार ॥ ११ ॥
रतनत्रयचिरमुकुटविशाल। सोभै कंठ सुगुन मनिमाल ॥
मुक्तिनार भरता भगवान। वासुपूज बंदौ धर ध्यान ॥ १२ ॥
परम समाधिसरूप जिनेश। ज्ञानी ध्यानी हितउपदेश ॥
कर्मनाशि शिवसुख विलसंत। बंदौं विमलनाथ भगवंत ॥ १३ ॥

अंतर बाहिर परिग्रह डारि । परमादिगंबरव्रतको धारि ॥
सर्वजीवहित राह दिखाय । नमौं अनंत वचनमनलाय ॥ १४ ॥
सात तत्त्व पंचासतिकाय । अरथ नमों छदरब बहुभाय ॥
लोक अलोक सकल परकाश । बंदौं धर्मनाथ अविनाश ॥ १५ ॥
पंचम चक्रवरति निधिभोग । कामदेव द्वादशम मनोग ॥
शांतिकरन सोलम जिनराय । शांतिनाथ बंदौं हरखाय ॥ १६ ॥
बहुथुति करे हरष नहिं होय । निंदे दोष गहैं नहिं कोय ॥
शीलमान परब्रह्मस्वरूप । बंदौं कुंथुनाथ शिवभूप ॥ १७ ॥
द्वादशगण पूजे सुखदाय । थुतिबंदना करैं अधिकाय ॥
जाकी निजथुति कबहुं न होय । बंदौं अरजिनवर पद दोय ॥ १८ ॥
परभव रतनत्रयअनुराग । इहभव व्याहसमय वैराग ॥
बालब्रह्मपूरनव्रतधार । बंदौं मल्लिनाथ जिनसार ॥ १९ ॥

विन उपदेश स्वयं वैराग । थुति लोकांत करैं पगलाग ॥
नमःसिद्ध कहि सब व्रत लेहिं । वंदौं मुनिसुव्रत व्रत देहिं ॥ २० ॥
श्रावक विद्यावंत निहार । भगतिभावसों दियो अहार ॥
वरसे रतनराशि ततकाल । बंदौं नमिप्रभु दीनदयाल ॥ २१ ॥
सब जीवनकी बंदी छोर । रागदोष दो बंधन तोर ॥
रजमति तजि शिवतियसों मिले । नेमिनाथ बंदौं सुखनिले ॥ २२ ॥
दैत्य कियो उपसर्ग अपार । ध्यान देखि आयो फनिधार ॥
गयो कमठ शठ मुख कर श्याम । नमौं मेरुसम पारसस्वाम ॥ २३ ॥
भवसागरतैं जीव अपार । धरमपोतमे धरे निहार ॥
डूबत काढे दया विचार । वर्द्धमान बंदौं बहुबार ॥ २४ ॥

दोहा ।

चौवीसौं पदकमलजुग, बंदौं मनवचकाय ॥

'द्यानत' पढै सुनै सदा, सो प्रभु क्यों न सहाय ॥ २५ ॥

—:०:—

अथ देवपूजा भाषा ।

दोहा ।

प्रभु तुम राजा जगतके, हमें देय दुख मोह ।
तुम पद पूजा करत हूं, हमपै करुना होहि ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवन् अत्र अवतरावतर संवौषट्[1] ।

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः[2]

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवन् अत्र मम सन्निहितो भव भव ! वषट्[3] ।

१ संवौषडिति देवोद्देशेन हविस्त्यागे २। ठः ठः इति वृहद्ध्वनौ। ३ वषडिति देवोद्देश्यकहविस्त्यागे।

छंद त्रिभंगी ।

बहु तृषा सताये, अति दुख पायो, तुमपै आयो जल लायो ।
उत्तम गंगाजल, शुचि अति शीतल, प्रासुक निर्मल गुन गायो ॥
प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो ।
यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै, न्याय करीजै, दया धरो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवद्भ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

अघतपत निरंतर अगनिपटंतर. मो उर अंतर. खेद कर्‌यौ ॥
लै बावन चंदन, दाहनिकंदन, तुमपदबंदन, हरष धर्‌यौ ॥ प्रभु० ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो भवतापनाशाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥

ओगुन दुखदाता, कह्यो न जाता, मोहि असाता, बहुत करै ॥
तंदुल गुनमंडित, अमल अखंडित, पूजत पंडित, प्रीति धरै ॥ प्रभु०

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

सुरनर पशुको दल, काम महाबल, बात कहत छल, मोहि लिया ॥
तांके शर लाऊं, फूल चढाऊं, भगति बढाऊं, खोल हिया ॥ प्रभु० ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति० ॥ ४ ॥

सब दोषनमाहीं, जासम नाहीं, भूख सदा ही, मो लागे ॥
सद घेवर बावर, लाडू बहु धर, थार कनक भर, तुम आगै ॥ प्रभु०

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यः क्षुद्रोगनाशाय नैवे०॥

अज्ञान महातम, छाय रह्यो मम, ज्ञान ढक्यो हम, दुख पावैं ॥

तम मेटनहारा, तेज अपारा दीप संवारा, जस गावैं ॥ प्रभु० ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो मोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्वपामीति० ॥ ६ ॥

इह कर्म महावन, भूल रह्यो जन, शिवमारग नहिं, पावत है ॥
कृष्णागरुधूपं, अमलअनूपं, सिद्धस्वरूपं, ध्यावत है ॥
प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो ॥
यह अरज सुनीजे, ढील न कीजे, न्याय करीजे, दया धरो ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं०

सबतैं जोरावर, अंतराय अरि, सुफल विघ्न करि, डारत हैं ॥
फलपुंज विविध भर, नयनमनोहर श्रीजिनवरपद, धारत हैं ॥ प्र०

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं०

आठौ दुखदानी, आठनिशानी, तुम ढिग आनी, वारन हो ।

दीननिस्तारन, अधमउधारन 'द्यानत' तारन, कारन हो ॥ प्रभु०॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवद्भ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा ।

गुण अनंत को कहि सकै, छियालीस जिनराय ।
प्रगट सुगुन गिनती कहूं, तुम ही होहु सहाय ॥ १ ॥

चौपाई (१६ मात्रा)

एक ज्ञान केवल जिनस्वामी । दो आगम अध्यातम नामी ॥
तीन काल विधि परगट जानी । चार अनन्तचतुष्टय ज्ञानी ॥ २ ॥
पंच परावर्तन परकासी । छहों दरबगुनपरजयभासी ॥
सातभंगवानी परकाशक । आठों कर्म महारिप्रनाशक ॥ ३ ॥

नव तत्त्वनके भाखनहारे। दश लच्छनसों भविजन तारे।
ग्यारह प्रतिमाके उपदेशी। बारह सभा सुखी अकलेशी ॥
तेरहविधि चारितके दाता। चौदह मारगनाके ज्ञाता ॥
पंद्रह भेद प्रमादनिवारी। सोलह भावन फल अविकारी ॥
तारे सत्रह अंक भरत भुव। ठारे थान दान दाता तुव ॥
भाव उनीस जु कहे प्रथम गुन। वीस अंक गणधरजीकी धुन ॥
इक्कइस सर्व घातविधि जानै। बाइस बंध नवम गुण थानै ॥
तेइस निधि अरु रतन नरेश्वर। सो पूजै चौवीस जिनेश्वर ॥
नाश पचीस कषाय करी हैं। देशघाति छब्बीस हरी हैं ॥
तत्त्व दरब सत्ताइस देखे, मति विज्ञान अठाइस पेखे ॥
उनतिस अंक मनुष सब जाने, तीस कुलाचल सर्व बखाने ॥
इकतिस पटल सुधर्म निहारे, बत्तिस दोष समाइक टारे ॥

तेतिस सागर सुखकर आये । चौंतिस भेद अलब्धि बताये ॥
पैंतिस अच्छर जप सुखदाई । छत्तिस कारन रीति मिटाई ॥ १० ॥
सैंतिस मग कहि ग्यारह गुनमें । अठतिस पद लहि नरक अपुनमें
उनतालीस उदीरन तेरम । चालिस भवन इंद्र पूजैं नम ॥ ११ ॥
इकतालीस भेद आराधन । उदै बियालीस तीर्थंकर भन ॥
तेतालीस बंध ज्ञाता नहिं । द्वार चवालिस नर चौथेमहिं ॥१२॥
पैंतालीस पल्यके अच्छर । छियालीस विन दोष मुनीश्वर ॥
नरक उदै न छियालीस मुनिधुन । प्रकृति छियालीस नाश दशम गुन ॥ १३ ॥
छियालीस धन राजु सात भुव । अंक छियालीस सरसो कहि कुव ।
भेद छियालीस अंतर तपवर । छियालीस पूरन गुन जिनवर ॥

अडिल्ल ।

मिथ्या तपन निवारन चंद समान हो
मोहतिमिर वारनको कारन भान हो॥
काल कषाय मिटावन मेघ मुनीश हो
'द्यानत' सम्यकरतनत्रय गुनईश हो॥ १५॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवद्भ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामि ॥

[पूर्णार्घ्यके बाद विसर्जन करना चाहिये]

इति श्रीजिनेन्द्रपूजा समाप्ता ।



सरस्वतीपूजा ।

दोहा ।

जनम जरा मृतु छय करै, हरै कुनय जडरीति ।
भवसागरसों ले तिरै, पूजैं जिनवचप्रीति ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि ! अत्र अवतर अवतर, संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

त्रिभंगी ।

छीरोदधि गंगा विमल तरंगा, सलिल अभंगा सुखगंगा ।
भरि कंचन झारी धार निकारी, तृषा निवारी हित चंगा ॥
तीर्थंकरकी धुनि गनधरने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञानमई ।
सो जिनवरवानी शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी पूज्य भई ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै जलं निर्वपामि इति स्वाहा ॥ १ ॥

करपूर मंगाया चंदन आया, केशर लाया रंग भरी।
शारदपद वंदौं मन अभिनंदौं, पापनिकंदौं दाह हरी ॥ तीर्थ० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

सुखदायकमोदं धारकमोदं, अतिअनुमोदं चंदसमं।
बहुभक्ति बढाई कीरति गाई, होहु सहाई मात ममं ॥ तीर्थ० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षतान् निर्वपामि० ॥ ३ ॥

बहुफूलसुवासं विमलप्रकाशं, आनंदरासं लाय धरे।
मम काम मिटायौ शील बढायौ, सुख उपजायौ दोष हरे ॥ तीर्थ० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पुष्पं निर्वपामि० ॥ ४ ॥

पकवान बनाया बहुघृत लाया, सब विध भाया मिष्ट महा।
पूजूं थुति गाऊं प्रीति बढाऊं, क्षुधा नशाऊं हर्ष लहा ॥ तीर्थ० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नैवेद्यं निर्वपामि ॥ ५ ॥

करि दीपक ज्योतं तमछय होतं, ज्योति उदोतं तुमहिं चढै ।
तुम हो परकाशक भरमविनाशक, हम घट भासक ज्ञान बढै ।।तीर्थं।।

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्वपामि० ॥ ६ ॥

शुभगंध दशोंकर पावकमें धर, धूप मनोहर खेवत हैं ।
सब पाप जलावैं पुण्य कमावैं, दास कहावैं सेवत हैं ॥ तीर्थं० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूपं निर्वपामीति० ॥ ७ ॥

बादाम छुहारी लौंग सुपारी, श्रीफल भारी ल्यावत हैं ।
मनवांछित दाता मेट असाता, तुम गुन माता ध्यावत हैं ॥ तीर्थं०॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्वपामि० ॥ ८ ॥

नयननसुखकारी मृदुगुनधारी. उज्वलभारी मोल धरै ।
शुभगन्धसम्हारा वसननिहारा. तुमतर धारा ज्ञान करै ॥
तीर्थंकरकी धुनि गनधरने सुनि. अंग रचे चुनि ज्ञानमई ।

सो जिनवरवानी शिवसुखदानी. त्रिभुवनमानी पूज्य भई ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै वस्त्रं निर्वपामि ॥ ९ ॥

जलचंदन अच्छत फूल चरू चत. दीप धूप अति फल लावे ।
पूजाको ठानत जो तुम जानत. सो नर द्यानत सुख पावै ॥ तीर्थं० ।

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामि ॥ १० ॥

अथ जयमाला ।

सोरठा ।

ओंकार धुनिसार. द्वादशांग वाणी विमल ।
नमों भक्ति उर धार. ज्ञान करै जडता हरै ॥

वेसरी ।

पहला आचारांग बखानो । पद अष्टादश सहस प्रमानो ।
दूजा सूत्रकृतं अभिलाषं । पद छत्तीस सहस गुरु भाषं ॥ १ ॥

तीजा ठाना अंग सुजानं । सहस बियालिस पदसरधानं ॥
चौथो समवायांग निहारं । चौसठ सहस लाख इकधारं ॥ २ ॥
पंचम व्याख्याप्रगपाति दरशं । दोय लाख अठाइस सहसं ।
छट्ठा ज्ञातृकथा विसतारं । पांचलाख छप्पन्न हजारं ॥ ३ ॥
सप्तम उपासकाध्ययनंगं । सत्तर सहस ग्यारलख भंगं ।
अष्टम अंतकृतं दस ईसं । सहस अठाइस लाख तेईसं ॥ ४ ॥
नवम अनुत्तरदश सुविशालं । लाख बानवै सहस चवालं ।
दशम प्रश्नव्याकरण विचारं । लाख तिरानवै सोल हजारं । ५ ।
ग्यारम सूत्रविपाक सु भाखं । एक कोडि चौरासी लाखं ।
चार कोडि अरु पन्द्रह लाखं । दो हजार सब पद गुरुशाखं ॥ ६ ॥
द्वादश दृष्टिवाद पनभेदं । इकसौ आठ कोडि पन वेदं ॥
अडसट लाख सहस छप्पन हैं । साहित पंचपद मिथ्या हन हैं ॥ ७ ॥

इक सौ बारह कोडि बखानो । लाख तिरासी ऊपर जानो ॥
ठावन सहस पंच अधिकाने । द्वादश अंग सर्व पद माने ॥ ८ ॥
कोडि इकावन आठ हि लाखं । सहस चुरासी छहसौ भाखं ।
साढे इकीस शिलोक बताये । एक एक पदके ये गाये ॥ १० ॥

घत्ता ।

जा बानीके ज्ञानमें । सूझै लोक अलोक ।
'द्यानत' जग जयवंत हो । सदा देत हौं धोक ॥

इति सरस्वतीपूजा ।

गुरुपूजा ।

दोहा ।

चहुं गति दुखसागरविषै, तारनतरनजिहाज ।

रतनत्रयनिधि नगन तन, धन्य महा मुनिराज ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्रावतरावतर । संवौषट् ।
ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

गीता छंद ।

शुचि नीर निरमल छीरदधिसम, सुगुरु चरन चढाइया ।
तिहुं धार तिहुं गदटार स्वामी, अति उछाह बढाइया ॥
भव भोगतनवैराग्य धार, निहार शिव तप तपत हैं ।
तिहुं जगतनाथ अराध साधु सु, पूज नित गुन जपत हैं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो जलं नि० ॥ १ ॥

करपूर चंदन सलिलसौं घसि, सुगुरुपद पूजा करौं ।
सब पाप ताप मिटाय स्वामी, धरम शीतल विस्तरैं ।

भवभोगतनवैराग धार निहार, शिवतप तपत हैं।
तिहु जगतनाथ अराध साधु सु. पूज नितगुन जपत हैं ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो भवतापविनाशनाय चंदनं नि० ॥ २॥

झिनवा कमाद सुवास उज्वल, सुगुरुपगतर धरत हैं।
गुनयार औगुनहार स्वामी, वंदना हम करत हैं ॥ भव भो० ॥३ ॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ॥ ३ ॥

शुभफूलरासप्रकाश परिमल. सुगुरुपांयनि परत हों।
निरबार मार उपाधि स्वामी- शील दृढ उर धरत हों ॥ भव० ॥४॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ।

पकवान मिष्ट सलौन सुंदर. सुगुरु पांयन प्रीतिसों।
कर छुधारोग विनाश स्वामी, सुथिर कीजे रीतिसों ॥ भव० ॥५॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः छुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ।

दीपक उदोत सजोत जगमग. सुगुरुपद पूजों सदा ।
तमनाश ज्ञानउजास स्वामी. मोहि मोह न हो कदा ॥ भव० ॥६ ॥
ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि० ॥

बहु अगर आदि सुगंध खेऊं सुगुण पद पद्महिं खरे ।
दुख पुंज काठ जलाय स्वामी गुण अछय चित्तमें धरे ॥ भव० ७ ॥
ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ॥ ७ ॥

भर थार पूर बदाम बहुविधि, सुगुरुक्रम आगें धरों ।
मंगल महाफल करो स्वामी, जोर कर विनती करों ॥ भव० ८ ॥
ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥ ८ ॥

जल गंध अक्षत फूल नेवज । दीप धूप फलावली ।
'द्यानत' सुगुरुपद देहु स्वामी हमहिं तार उतावली ॥ भव० ॥ ९ ॥
ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व० ॥ ९ ॥

अथ जयमाला।

दोहा।

कनककामिनी विषयवश. दीसे सब संसार।
त्यागी वैरागी महा. साधु सुगुनभंडार ॥ १ ॥
तीन घाटि नवकोड सब. वंदों सीस नवाय।
गुन तिन अट्ठाईस लों. कहूं आरती गाय ॥ २ ॥

वेसरी छन्द।

एक दया पालैं मुनिराजा. रागदोष द्वै हरन परं।
तीनों लोक प्रगट सब देखैं. चारो आराधननिकरं ॥
पंच महाव्रत दुद्धर धारैं. छहो दरब जानै सुहितं।
सातभंगवानी मन लावैं. पावैं आठ रिद्ध उचितं ॥ ३ ॥
नवो पदारथ विधिसों भाखैं. बंध दशो चूरन सरनं।
ग्यारह शंकर जानै मानै. उत्तम बारह वृत धरनं।
तेरह भेद काठिया चूरे. चौदह गुनथानक लखियं।

महाप्रमाद पंचदश नाशे. सोलकषाय सबै नाखियं ॥ ४ ॥
बंधादिक सत्रह सुतर लख. ठारह जन्म न मरन मुनं ॥
एक समय उनईस परिषह. वीस प्ररूपनिमें निपुनं ॥
भाव उदीक इकीसों जानै. बाइस अभखन त्याग करं ।
अहिमिंदर तेइसों बंदैं. इंद्र सुरग चौवीस वरं ॥ ५ ॥
पच्चीसों भावन नित भावैं. छहसौं अंगउपंग पढैं ।
सत्ताईसों विषय विनाशैं. अट्ठाईसों गुण सु पढैं ॥
शीतसमय सर चौपटवासी. ग्रीषमागिरिसिर जोग धरैं ।
वर्षा वृक्ष तरैं थिर ठाढे. आठ करम हनि सिद्धि वरैं ॥ ६ ॥

दोहा ।

कहां कहां लों भेद मैं. बुधि थोरी गुन भूर ।
'हेमराज' सेवक हृदय. भक्ति करो भरपूर ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि० ॥

(इति गुरुपूजा समाप्ता)